खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई

श्रीहरये नमः
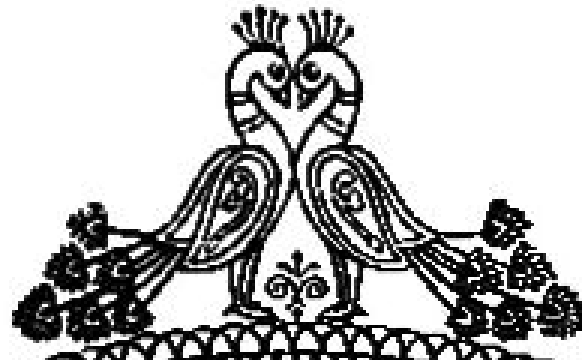
पारदसंहिता

हिन्दीटीकासहित

अग्रवालकुलभूषणअलीगढ़निवासी बा० निरंजनप्रसाद गुप्तेन संगृहीता

मरुदेशान्तर्गतजैसलमेरवास्तव्येन व्यासोपाह्वज्येष्ठमल्लकाव्यतीर्थेन

मनुष्यभाषायामनूदिता

मुद्रक एवं प्रकाशक:

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई – ४०० ००४.

भूमिका

प्रियमित्रो! इस समय महात्माओं, विद्वान् वैद्यों और गृहस्थों से प्रार्थना की जाती है कि वे मेरे इस तुच्छ लेख पर एक बार अवश्य दृष्टि दें। सज्जनो! इस बात को आप अवश्य ही जानते हैं कि वर्तमान समय में कला और विद्याओं में कितना उलट फेर हो रहा है, जिसके द्वारा प्रत्येक स्वतन्त्र राज्य के विद्वान् और धनाढ्य पुरुष अनेक प्रकार के सुख पा रहे हैं। इतना ही नहीं, देश के राजालोग भी अपनी २ प्रजा को सुशिक्षित और धनी बनाने के लिये अनेक २ उपाय कर रहे हैं। आप इसको ध्यानपूर्वक विचार देखिये कि एक भारतवर्ष के अतिरिक्त ऐसा कोई भी देश न होगा, जिस देश के मनुष्यों में स्वदेशाभिमान, मातृभूमि पर वत्सलता, ऐक्य और स्वदेश के प्रति भ्रातृभाव न हो, केवल यही हतभाग्य हिन्दुस्तान ही एक ऐसा देश है कि जिसके निवासियों के मस्तिष्क में इस हिस्ट्री ने ऐसा भाव भर दिया है कि न भारतवर्ष हमारा और न हम भारतवर्ष के। हम इन्हीं भावों के कारण इस विशालभारतवर्ष में उन्नति के समस्त पदार्थों के उपस्थित रहने पर भी अपनी उन्नति नहीं कर सकते। प्रत्यके देश में छः ६ प्रकार की प्रजा हो सकती है, धनाढ्य और दरिद्री, विद्वान्, और मूर्ख, सुखी और दुःखी इनमें दरिद्री, मूर्ख और दुःखी ये तीनों ही देश का उद्धार कर ही नहीं सकते, विचारे सुखीजन अपनी विलासता के सामने देशोद्धार का विचार करें सो क्यों? अपने धन से गर्वित होकर धनाढ्य पुरुष विदेशीय कम्पनियों तथा दरिद्री देशीभाइयों द्वारा ब्याज पैदा कर अपनी आत्मा तथा देश को उद्धृत समझते हैं। अब रहे विद्वान् वह अवश्य देश का उद्धार कर सकते है परन्तु द्रव्य की सहायता के बिना अपने गाल पर हाथ रखकर विचारते ही रहते है। ऐसी अवस्था में देश का उद्धार होना कठिन है। ठीक यही दशा हमारे भारतवर्ष की हो रही है। यह प्राकृतिक नियम है कि किसी पदार्थ के एक अवयव की वृद्धि से उसकी उन्नति नहीं समझी जाती, जैसे मनुष्य के किसी अंश (हाथ पैर आदि) की वृद्धि से मनुष्य के शरीर की उन्नति नहीं समझी जाती, प्रत्युत उसकी विकृतावस्था ही समझी जाती है और यदि मनुष्य का प्रत्येक अंग पुष्ट होता जाय तो वह अत्यन्त दर्शनीय हो जायगा। इसी नियम के अनुसार भारतवर्ष का उद्धार प्रत्येक भारतीय प्रजा की उन्नति पर निर्भर है।

प्रियबन्धुगणों ! मैं आपके चित्त को उस उन्नति की और आकर्षित करना चाहता हूं कि जिससे संसारभर की उन्नतियां स्वयं सिद्ध हो जायँगी। भला उसका नाम क्या है ? लीजिये उसका नाम है "आरोग्योन्नति" एक फारसी के कवि का कथन है कि 'एक तन्दुरुस्ती हजार निआमत' बिना आरोग्योन्नति के आप किसी प्रकार की उन्नति नहीं कर सकते। क्योंकि समस्त उन्नतियों की जड़ आरोग्योन्नति है इसी को चरक में लिखा है कि–

धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम् ॥

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनकी उत्तम जड़ आरोग्य है। किन किन कारणों से आरोग्योन्नति हो सकती है इसके जानने के लिये आयुर्वेदशास्त्र का पढ़ना पढ़ाना तथा आयुर्वेदीय औषधों का प्रचार करना या कराना प्रत्येक भारतीय प्रजा का कर्तव्य है। और जिन सज्जनों का ऐसा विचार है कि जब हमारे यहां सफाखानों में यूरोपियन दवाओं का प्रचार हो रहा है तो आयुर्वेदीय दवाओं के प्रचार की क्या आवश्यकता है ? क्योंकि हमको न क्वाथ (काढ़ा) बनाना पड़ता न चूरन कूटना पड़ता और न अन्य किसी प्रकार का परिश्रम ही करना पड़ता, तो भला आप ही बताइयेगा कि हम इस सरल प्रणाली को छोड़कर इस दुःखद चिकित्साप्रणाली का अनुसरण करें सो क्यों ? उन सत्पुरुषों से हम सविनय प्रार्थना करते है कि ऐ सभ्यपुरुषों ! कब सम्भव हो सकता है कि ईश्वर हमको भारतवर्ष में उत्पन्न कर हमारे उपयोगी पदार्थों को युरोप में पैदा करता, इसी बात को पुष्ट करते हुए महर्षि अग्निवेशजी महाराज चरकसंहिता में लिखते है कि–

यस्य देशस्य यो जन्तुस्तज्जं तस्यौषधं हितम् ॥

अर्थात् देश के रहने वाले जो जीव है उनके लिये उसी देश में पैदा हुआ औषध हितकारी होता है तात्पर्य यह है कि अन्य देश में पैदा हुए औषध हमारे उपयोगी कभी सिद्ध नहीं हो सकते। हां, एक शंका आप लोगों के हृदय में अवश्य रहती होगी वह हम स्वयं आपलोगों को सुनाये देते है, आप इतने व्याकुल क्यों होते है ? सुनिये साहब ! आप अपने मन में यह अवश्य विचारते ही होंगे कि रसायनविद्या द्वारा जो औषध प्रस्तुति किये जाते है, वह किस प्रकार निर्गुण या हमारे अनुपयोगी सिद्ध हो सकते है। ठीक है, साहब ! हम भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि रसायनविद्या औद्भिज्ज आदि पदार्थों के अंशों को पृथक् पृथक् करने में अत्यन्त उपयोगी है, परन्तु रुग्णशरीर में उसकी क्रिया के निर्धारणार्थ रासायनिक युक्तियों द्वारा (या ज्ञान से) सर्वथा शुभलक्षण की प्रत्याशा नहीं हो सकती। यहां तक कि चिकित्सा के समय अनेक स्थलों में रासायनिक युक्तियों द्वारा अनेक प्रकार के भ्रम उपस्थित होते हैं। जैसे मृत्पाण्डुरोग में लौह का व्यवहार करना, लौह पाण्डु रोग का नाशक होने पर भी परिपाकशक्ति को नष्ट करता है। यह अवश्य स्वीकार करना होगा कि रसायनशास्त्र बहुविध घटनास्थल में वास्तविक तत्त्व के निर्णय करने के लिये यथा कथंचित् उपयुक्त हो सकता है परन्तु रासायनिक विश्लेषण द्वारा कहीं भी औषधिनिर्णय नहीं हो सकता इसलिये आप समझ गये होंगे कि रासायनिक क्रिया द्वारा बनाई गई विलायती दवाइयां हमारे उपयोगी नहीं है इन क्षणिक सुखकारी औषधियों का भयंकर परिणाम होता है जैसे कुनैन; बस अब अधिक लिखने की कोई आवश्यकता नहीं आप स्वयं विचार सकते है कि इन युरोपियन दवाओं से धन धर्म और और नीरोगता नष्ट नहीं होती तो क्या होता है अतएव आप अपने धन धर्म" और नीरोगता की रक्षा करना चाहते हो तो आयुर्वेदीय दवाओं का सेवन कीजिये, मेरे विचार में परिश्रम की अपेक्षा धन और धर्म की रक्षा करना अत्यावश्यक है एवं धन तथा धर्म की रक्षा होने से देश का उद्धार होगा।

श्रीजगदीश्वर जगन्नियन्ता जगदुत्पादक सर्वशक्तिमान् परमकारुणिक सर्वहितकारी सच्चिदानन्द आनन्दकंद यशोदानन्दन श्रीकृष्णचन्द्र हैं कि जिनकी कृपा से मैं इस ग्रंथ की भूमिका को लिखने के लिये आज उद्यत हुआ हूं उनको कोटिशः धन्यवाद है। एक दिन बाबू निरंजनप्रसादजी साहब कामरोग से पीड़ित हो[illegible]

वैद्य साहब के पास गये और प्रार्थना की कि आप मुझको वह कासकर्तरीरस दीजिये कि जिसमें शुद्ध पारद हो परंतु वह अपने वांछित रस को न पाकर औ दुःखी हो घर को लौट आये और वह रात अनेक प्रकार के विचार करते करते बीत गई। दूसरे दिन सूर्योदय होते ही मन में विचार करने लगे कि वह उच्च कोटि का प्राप्त हुआ हमारा वैद्यकशास्त्र जिसकी निष्पक्ष मिश्र फारिस और यूरोपियन लोग भी प्रशंसा करते थे, वह आज इतनी निकृष्ट दशा को प्राप्त हो गया है कि इतने बड़े नगर में ऐसा साधारण रस भी उपलब्ध नहीं होता तो अन्यरसों का कहना ही क्या है ? मेरी समझ में इस अवनति के तीन कारण है।

प्रथम कारण यह है कि जालिम बादशाह से हमारे उत्तम उत्तम ग्रन्थों का जलाया जाना। दूसरा राजकीय आश्रय का न होना। तीसरा वैद्यराजाओं का शिक्षित और अनुभवी न होना (क्षमा कीजिये समस्त वैद्यों के लिये मैं ऐसा कहना ठीक नहीं समझता हूं, परन्तु अधिकांश से मेरा कहना असंभव भी न होगा) अर्थात् गुरुद्वारा संस्कृतभाषा में वैद्यकशास्त्रों का अनभ्यास, औषधियों का अपरिचय और दूसरों (जो कि वैद्य नहीं है या आजीविकार्थ जिन्होंने वैद्यकशास्त्रों का अन्यान्य भाषाओं में की हुई टीकाओं की सहायता से अनुवाद किया हो) के किये हुए भाषानुवादों के भरोसे से ही चिकित्सा का आरम्भ करना इत्यादि कारण है।

जब तक इन कारणों को दूर नहीं किया जायगा तब तक आयुर्वेद का उद्धार न होगा। आयुर्वेद की अवनति के प्रथम कारण को दूर करने के लिये यही उपाय ठीक हो सकता है कि प्राचीन प्राचीन पुस्तकों का अन्वेषण करना तथा प्रकाशित करना। तथा अवनति के द्वितीय कारण को दूर करने के वास्ते गवर्नमेण्ट से प्रार्थना करना यही एक प्रबल उपाय प्रतीत होता है, परन्तु वह कुछ कष्टसाध्य है। क्योंकि न्यायशील गवर्नमेण्ट के राज्य को अनुमान एक शताब्दी से अधिक समय बीत गया होगा, परन्तु इस भारतीय हितकारक आयुर्वेदिक चिकित्सा का कुछ भी उद्धार न किया, देखिये बनारस, कलकत्ता और लाहौर आदि प्रतिष्ठित प्रतिष्ठित नगरों में संस्कृत विद्या के अनेक विद्यालय हैं और उनमें प्रत्येक शास्त्र का पढ़ाना तथा उनकी परीक्षायें भी होना प्रचलित है। परन्तु बड़े शोक का विषय है कि उनमें न तो आयुर्वेदशास्त्र पढ़ाया जाता और न उसकी परीक्षा ही होती है। बस अधिक दृष्टांतो की कोई आवश्यकता नहीं हम अवश्य समझ ही गये हैं कि महारी गवर्नमेण्ट की इच्छा से इस शास्त्र के उद्धार की होती, तो क्या इन विद्यालयों में यह विद्या न पढ़ाई जाती। विचार करने से प्रतीत होता है कि इसमें भी हमारी गवर्नमेंट का कुछ भी दोष नहीं है, यदि दोष भी है तो हमारा क्योंकि हमने कभी भी उस विषय में गवर्नमेण्ट से प्रार्थना न की। इसलिये आयुर्वेदोद्धारणार्थ हमको स्वयं कटिबद्ध होना चाहिये और हमारी गवर्नमेंट को भी। अन्यथा इसका उद्धार होना दुःसाध्य है।

अवनति के तृतीय कारण को दूर करने के लिये एक महान् आयुर्वेदीय विद्यालय तथा उसके अनके शाखाविद्यालय खोलना, और उनमें प्राचीन शास्त्रानुसार औषध रचना अथवा औषधों का नवीन नवीन आविष्कार करना, औषध परिचय और चिकित्सा का अभ्यास इत्यादि प्रचार करना उचित है।

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

पारदसंहिता

हिन्दीटीकासमेता

प्रथमोऽध्यायः

रसवंदना

आधिव्याधिसमूहपाटनपटुर्दारिद्रयविद्रावणो लोकद्विष्टजरापराक्रमहरः पापौघनिर्णाशकः । स्वेच्छाहारविहारसौख्यजननो दिव्याष्टसिद्धिप्रदः श्रीशंभोः करुणारसो रसवरस्तस्मै नमामो भुवि ॥१॥ (ध० ध० सं०)

अर्थ–इस संसार में जो अनेक आधि (मानसिक दुःख) और व्याधियों (देह के दुःख) के उखाड़ने में चतुर दरिद्रता को दूर करनेवाला, संसार का शत्रुरूप, जरा अवस्था के पराक्रम को नष्ट करनेवाला, अत्यन्त पापों का नाशकारक, अपनी इच्छा से किये हुए आहार विहार के सुख का देनेवाला, दिव्य आठ सिद्धियों का दाता, श्रीमहादेवजी का सब रसों में उत्तम जो करुणारस है इसको हम नमस्कार करते हैं॥१॥

यः श्लेष्मानिलपित्तदोषशमनो रोगापहो मूर्च्छितः पंचत्वं च गतो ददाति विपुलं राज्यं चिरं जीवितम् । बद्धः खे गमनः करोत्यमरतां विद्याधरत्वं नृणां सोऽयं पातु सुरासुरेन्द्रनमितः श्रीसूतराजः प्रभु ॥२॥

(ध० धं० सं– र० प०)

अर्थ–जो मूर्च्छित किया हुआ पारद कफ, वात और पित्त को शान्तकारक और रोगों को दूर करनेवाला होता है और मरा हुआ पारा बढ़े हुए राज्य और चिरकाल तक जीवन देता है और बद्ध पारद मनुष्यों को आकाशगति, देवतापन, विद्याधरपन को करता है, जिसको कि बड़े बड़े देवता और दैत्य नमस्कार करते हैं वो यह प्रभु श्रीसूतराज अर्थात् पारद हमारी रक्षा करे॥२॥

हरति सकलरोगान्मूर्च्छितो यो नराणां वितरति किलबद्धः खेचरत्वं जवेन । सकलसुरमुनीन्द्रैर्वन्दितं शंभुबीजं स जयति भवसिन्धोः पारदः पारदोऽयम् ॥३॥ (रसमंजरी)

अर्थ–जो मूर्च्छित हुआ पारद मनुष्यों के समस्त रोगों को दूर करता है बँधा हुआ खेचरत्व (आकाश में उड़ना) को शीघ्र ही देता है और जो सकल देवता और मुनीश्वर से नमस्कार किया हुआ श्रीमहादेवजी का वीर्य्य है, उस संसाररूपी समुद्र से पार करनेवाले पारद का जय हो॥३॥

रसमहिमा

हतो हन्ति जराव्याधिं मूर्च्छितो व्याधिघातकः बद्धः[1] खेचरतां धत्ते कोऽन्यः सूतात्कृपाकरः ॥४॥ रसरत्नाकररसेन्द्रसारसंग्रहः ॥४ (र० रा० प० २ र० सा० प० १) (र० रत्ना०)

अर्थ–मरा हुआ पारद बुढ़ापे के दुःखों (बिना समय केशों का श्वेत होना, त्वचा में झुरियों का पड़ना इत्यादि) को नाश करता है, मूर्च्छित पारद देह के रोगों को दूर करता है और बँधा हुआ आकाश गति को प्राप्त करता है इसलिये पारद के बिना कृपा करनेवाला और कोई दूसरा नहीं है॥४॥

मूर्च्छितो हरति रुजो बंधनमुपलभ्य खे गतिं धत्ते ।
अमरीकरोति सुमृतः कोऽन्यः करुणाकरः सूतात् ॥५॥

अर्थ–पारा मूर्च्छित होकर रोगों को दूर करता है और बंधन को प्राप्त होकर आकाशगति को देता है और स्वयं मरा हुआ दूसरों को अमर करता है। इसलिये पारद के सिवाय कृपा करनेवाला और कोई दूसरा नहीं है॥५॥

सुरगुरुगोद्विजहिंसापापकलापोद्भवं किलासाध्यम् । चित्रं[2] तदपि च शमयति यस्तस्मात्कः पवित्रतरः सूतात् ॥६॥

(र० रा० सु० र० सा० प० र० र० स० र० हृ०)

१–धत्ते च खे गति बद्धः। २–श्वित्रं।

अर्थ–जो अनेक देवता, गुरु, गौ, ब्राह्मणों के हिंसारूप पापों से पैदा हुये असाध्य भी श्वेतकुष्ठ को नाश करता है उस पारद से पवित्र और कौन है॥६॥

तस्यास्तिस्वस्फुरति प्रादुर्भावः स शांकरः कोऽपि कथमन्यथा विलासं विलसन्मात्राच्छ्वित्रं नयति ॥७॥

अर्थ–क्योंकि उस पारद में कोई भी श्रीशंकर संबंधी प्रादुर्भाव है अन्यथा विलासमात्र से ही श्वेतकुष्ठ को तत्क्षण नाश कैसे कर सकता है॥७॥

पारदोत्पत्ति

शैलेऽस्मिन्शिवयोः प्रीत्या परस्परजिगीषया। संप्रवृत्ते च संभोगे त्रिलोकी–क्षोभकारिणी ॥८॥ निवारयितुं वह्निः संभोगं प्रेषितः सुरैः। कांक्षमाणैस्तयोः पुत्रं तारकासुरमारकम् ॥९॥ कपोतरूपिणं प्राप्तं हिमवत्कंदरेऽनलम्। अपश्यिभावसंक्षुब्धं स्मरलीलाविलोकिनम् ॥१०॥ तं दृष्ट्वा लज्जितः शंभुर्विरतः सुरतात्तदा। प्रच्युतश्चरमो धातुर्गृहीतः शूलपाणिना ॥११॥ प्रक्षिप्तो वदने वह्नेर्गंगायामपि सोऽपतत्। बहिः क्षिप्तस्तया सोऽपि परिदंदह्यमानया ॥१२॥ संजातास्तन्मलाधानाद्धातवः सिद्धिहेतवः। यावद्–वह्निमुखाद्रेतो न्यपतद्भूरिसारतः ॥१३॥ शतयोजननिम्नां स्तान्कृत्वा कूपांस्तु पञ्च च तदाप्रभृति कूपस्थं तद्रेतः पंचधाऽभवत् ॥१४॥

(र० र० स० ६ अन० तरं०–र० रा० सुं०)

अर्थ–अब पारद की उत्पत्ति को कहते हैं–हिमालय पहाड़ पर प्रीति पूर्वक आपस में एक दूसरे को जीतने की इच्छा से संसारभर को चलायमान करनेवाला श्रीमहादेव और पार्वतीजी का संभोग प्रारम्भ हुआ, तब श्रीमहादेव और पार्वतीजी के ऐसा पुत्र हो जो तारकासुर को मारे, इस तरह से चाहनेवाले देवताओं ने संभोग को निवारण कराने के लिये अग्नि देवता को कबूतर रूप बनाकर भेजा, जिसका मनुष्य के तुल्य चित्त चलायमान हो गया है उस कपोतरूप कामदेव की लीला देखनेवाले अग्नि को देखकर श्रीमहादेवजी लज्जा को प्राप्त हुए और संभोग करने से शान्त हो गये तब श्रीमहादेवजी ने संभोगावस्था में पतित हुए अपने वीर्य्य को लेकर अग्नि के मुख में डाल दिया। अग्नि देवता भी उस वीर्य के तेज के मारे जलता हुआ श्रीगंगाजी में गिर पड़ा। शिववीर्य से जलती हुई श्रीगंगाजी ने भी उस अग्निदेवता को जलधारा से बाहर फेंक दिया। अब श्रीमहादेवजी के वीर्य के मैल के रहने से सिद्धि के दाता धातु पैदा हुए और जब कि भारी होने के कारण शिववीर्य्य सौ सौ योजन के गहरे पांच कुयें बनाकर अग्नि के मुख से पृथ्वी पर गिरा तब से वह पारद पांच प्रकार का हो गया॥८–१४॥

पांच प्रकार के पारद के नाम और गुण

रसो रसेन्द्रः सूतश्च पारदो मिश्रकस्तथा। इति पंचविधो जातः क्षेत्रभेदेन संभुवः ॥१५॥ (र० र० स–र० रा० सुं०)

अर्थ–पृथक् पृथक् स्थान होने के कारण पारद पांच प्रकार का होता है, जैसे कि १ रस, २ रसेन्द्र, ३ सूत, ४ पारद और ५ मिश्रक ॥१५॥

रस

रसो रक्तो विनिर्मुक्तः सर्वदोषै रसायन।
संजातास्त्रिदशास्तेन नीरुजा निर्जरामराः ॥१६॥

(र० र० स०–र० रा० सुं०)

अर्थ–रसनाम का पारद लाल रंग का होता है, सर्व प्रकार के दोषों से रहित और रसायन है उसी पारद के सेवन करने से देवता राग, बुढापा और मृत्यु से रहित हो गये॥१६॥

रसेन्द्र

रसेन्द्रो दोषनिर्मुक्तः श्यावो रूक्षोऽतिनिर्मलः। रसायिनोऽभवंस्तेन नागा मृत्युजरोज्झिताः ॥१७॥ देवैर्नागैश्च तौ कूपौ पूरितौ मृद्भिरश्मभिः। तदा प्रभृति लोकानां तौ जातावतिर्दुर्लभौ ॥१८॥

(र० र० स–र० रा० सुं०)

अर्थ–रसेन्द्रनाम का पारद स्वभाव से ही निर्दोष, श्याव (काला पीला), रूखा और अत्यन्त निर्मल होता है, उसी पारद भक्षण से नागलेग बुढापा और मृत्यु से छूट गये हैं। इस पारद को खाकर मनुष्य अजर अमर न हो जायें, इस कारण देवता और नागलोकों ने उन दो कुओं को (जिनमें कि रस और रसेन्द्र नाम का पारा होता था) मिट्टी और पत्थर से भर दिया तब से दोनों जाति के पारद मनुष्यों को दुर्लभ हो गये॥१७–१८॥

सूत

ईषत्पतिश्च रूक्षाङ्गो दोषयुक्तश्च सूतकः। दशाष्टसंस्कृतैः सिद्धो देहं लोहं करोति सः ॥१९॥ (र० र० स– र० रा० सुं०)

अर्थ–सूतनाम का पारद कुछ पीला, रूखा और दोषों से मिला हुआ होता है जब कि सूतनाम का पारद १८ संस्कारों से सिद्ध होता है तब देह को लोहे के समान बना देता है॥१९॥

पारद

अथान्यकूपजः कोऽपि स चलः श्वेतवर्णवान्।
पारदो विविधैर्योगैः सर्वरोगहरः स हि ॥२०॥

(र० र० स– र० रा० सुं०)

अर्थ–अब जो कि चौथे कुएं में रहनेवाला पारा है उसको पारद कहते हैं। वह चंचल और सफेद रंग का होता है और अनेक प्रकार के प्रयोगों से समस्त रोगों का नाश करता है॥२०॥

मिश्रक

मयूरचन्द्रिकाच्छायः स रसो मिश्रको मतः।
सोऽप्यष्टादशसंस्कारयुक्तश्चातीव सिद्धिदः ॥२१॥

(र० र० स–र० रा० सुं०)

अर्थ–मिश्रक नामका पारद मोर के पर (पंख) की सी रंगत का और रसदार होता है। वह भी १८ संस्कारों से सिद्ध किया हुआ अनेक सिद्धियों को देता है॥२१॥

तीन प्रकार के पारदों की उत्तमता

त्रयः सूतादयः सूताः सर्वसिद्धिकरा अपि।
निजकर्मविनिर्माणैः शक्तिमन्तोऽतिमात्रया ॥२२॥
एतां रससमुत्पत्तिं यो जानाति स धार्मिकः।
आयुरारोग्यसंतानं रससिद्धिं च विंदति ॥२३॥

(र० र० स–६ र० रा० सुं०)

अर्थ–अनेक प्रकार की सिद्धि के देनेवाले तीनों सूतादिक (सूत, पारद, मिश्रक) अपने अपने कर्मों से सिद्ध किये हुए अत्यन्त शक्तिवाले हो जाते हैं, जो इस रसोत्पत्ति को जानता है वह धर्मात्मा आयु, आरोग्य, संतान और रससिद्धि को प्राप्त होता है॥२२॥२३॥

पारद ग्रहण करने का प्रथम उपाय

प्रथमे रजसि स्नातां हयारूढां स्वलंकृताम्। वीक्ष्यमाणां वधूं दृष्ट्वा जिघृक्षुः कूपगो रसः ॥२४॥ उद्गच्छति जवात्तपि तं दृष्ट्वायाति वेगतः। अनुगच्छति तां सूतः सीमानं योजनोन्मितम् ॥२५॥ प्रत्यायाति ततः कूपं वेगतः शिवसंभवः। मार्गनिर्मितगर्तेषु स्थितं गृह्णन्ति पारदम् ॥२६॥

(र० र० स०)

अर्थ–कुएँ का पारद; प्रथम मासिक धर्म में स्नान की हुई (अर्थात् जो प्रथम ही रजस्वला हुई हो), घोड़े पर सवार सजी हुई और अपने को देखती

वृन्ताकमूषाविवरण

वृन्ताकाकारमूषायां नालं द्वादशकांगुलम् । धत्तूरपुष्पवच्चोर्ध्वं सुदृढं श्लिष्टपुष्पवत् ॥२४३॥ अष्टांगुलं च सच्छिद्रं सा स्याद्वृन्ताकमूषिका । अनया खर्परादीनां मृदूनां सत्त्वमाहरेत् ॥२४४॥ (र. र. स.)

अर्थ–धतूरे के फूल के समान ऊंची तथा मुकड़े हुए धतूरे के फूल के समान दृढ़ आठ तथा बारह अंगुल नालवाली जो मूषा होती है। उसको वृन्ताक मूषा कहते हैं। इस मूषा से कोमल खर्पर आदि रसादिक को सत्त्व को निकालते है॥२४३॥२४४॥

गोस्तनीमूषाविवरण

मूषा या गोस्तनाकारा शिखायुक्तपिधानिका ।
सत्त्वानां द्रावणे शुद्धौ मूषा सा गोस्तनी भवेत् ॥२४५॥

(र. र. स.)

अर्थ–जो मूषा गौ के स्तन के आकारवाली तथा जिसका ढ़कना चोटीदार हो, वह गोस्तनी नाम की मूषा सत्त्वों के पातन तथा शुद्धि में उत्तम है॥२४५॥

मल्लमूषाविवरण

अथ मूषा च कर्तव्या सुरभिस्तनसन्निभा । पिधानकसमायुक्ता किंचिदुन्नतमस्तका ॥२४६॥ निर्दिष्टा मल्लमूषा सा मल्लद्वितयसंपुटात् ॥ पर्पटयादिरसादीनां स्वेदनाय प्रकीर्तिता ॥२४७॥ (टो. नं.)

अर्थ–दो मलरा लेवे उनमें से एक के ऊपर मिट्टी लगा लगा कर गौ के स्तन के आकार की मूषा बनावे तथा जिसका कुछ ऊपर का भाग उठा हुआ हो ऐसा ढकना हो उसको मल्लमूषा कहते हैं। इसका मल्लमूषा नाम रखने का कारण यह है कि यह मूषा दो मलसों के योग से बनती है। वह पर्पटी आदि रसों के स्वेदन के लिये श्रेष्ठ है॥२४६॥२४७॥

पक्वमूषाविवरण

कुलालभांडरूपा या दृढा च परिपाचिता ।
पक्वमूषेति सा प्रोक्ता पोटल्यादिविपाचने ॥२४८॥

(र. र. स.)

अर्थ–कुम्हार के बासन के समान आकार की जो दृढ़ पकाई गई है वह पोटली आदि पदार्थों के निमित्त पक्वमूषा कही जाती है॥२४८॥

अन्यच्च

कुलालभांडरूपा या दृढा च परिपाचिता । पक्वमूषेति संप्रोक्ता सा सर्वत्र विपाचने । सैव खुद्रा मता मंदा गंभीरा मारणोचिता ॥२४९॥

(टो. नं.)

अर्थ–जो कुम्हार के बासन की सदृश आकृतिवाली और दृढ़ पकाई हुई हो, उसको समस्त पदार्थों के सिद्ध करने के लिये पक्वमूषा कहते हैं और वही मूषा छोटी और गहरी हो तो मारण के योग्य होती है॥२४९॥

गोलमूषाविवरण

निर्वक्त्रगोलकाकारा पुटनद्रव्यगर्भिणी ।
गोलमूषेति सा प्रोक्ता सत्वरद्रवरोधिनी ॥२५०॥

(र. र. स.)

अर्थ–संपुट में द्रव्य रखकर ऊपर के मुख रहित जो गोल आकार बनाया जाता है, उसको गोलमूषा कहते हैं। इसमें पदार्थ शीघ्र ही बंद हो जाता है॥२५०॥

महामूषाविवरण

तले या कूर्पराकारा क्रमादुपरिविस्तृता ॥ स्थूलवृन्ताकवत्स्थूला महामूषेत्यसौ स्मृता ॥२५१॥

(र. र. स.)

अर्थ–जो मूषा पेंदी में कुछवे के समान चपटी तथा ऊपर को धीरे धीरे फैलती हुई हो और मोटे बैंगन के समान मोटी हो, उसको महामूषा कहते है॥२५१॥

मण्डूकमूषाविवरण

सा चायोऽभ्रकसत्त्वादेः पुटाय द्रावणाय च ॥ मंडूकाकारमूषा या निम्नतायामविस्तरा ॥२५२॥ षडंगुलप्रमाणेन मूषा मंडूकसंज्ञका ॥ भूमौ निखन्य तां मूषां दद्यात्पुटमथोपरि ॥२५३॥ (र. र. स.)

अर्थ–जिसका गहराई में विस्तार न हो तथा छः अंगुल जिसका प्रमाण हो, ऐसी जो मूषा बनाई जाती है, उसको मडूकमूषा कहते हैं। उस मूषा को धरती में गड्ढा खोदकर स्थापित करे। ऊपर से अग्नि जलावे तो वह मण्डूक मूषा लोह तथा अभ्रक सत्त्वाऽदिकों के पुट के वास्ते या गलाने के वास्ते उत्तम है॥२५२॥२५३॥

मूसलाख्यमूषाविवरण

मूषा या चिपिटा मूले वर्तुलाष्टांगुलोच्छ्रया ॥ मूषा सा मुसलाख्या स्याच्चक्रिबद्धरसे हिता ॥२५४॥ (र. र. स.)

अर्थ–जो मूषा जड़ में चिपटी हो तथा ऊपर से आठ अंगुल ऊंची और गोल हो, वह मुसलाख्य नाम वाली मूषा चक्रिबद्ध पारद के निर्माणार्थ उत्तम है॥२५४॥

रसनिगड

स्नुह्यर्कसम्भवं क्षीरं ब्रह्मबीजं च गुग्गुलुः ॥ सैन्धवं द्विगुणं मर्द्यं निगडोऽयं महोत्तमः ॥२५५॥

(रसेन्द्र सा. सं., र. चिं.)

अर्थ–थूहर का दूध, आक का दूध, ढाक के बीज, गूगल और सेंधा नोंन, इन सबको मिलाकर पारद से दूना लेवे फिर मर्दन करे तो यह उत्तम निगड़ बनता है॥२५५॥

निगड बनाने की तरकीब (उर्दू)

गूगल, टेसू के बीज; और इन दोनों के बराबर नमक सेंधा सबको थूहर और आक के दूध में खरल करके इसको बड़ा निगड कहते हैं। जिस घरिया पर इसका लेप होगा, उसमें से पारा न उड़ेगा।

(मुफ्रदात्मजाना कीमिया ॥१६॥)

रसनिगड

स्नुह्यर्कसंभवं क्षीरं ब्रह्मबीजानि गुग्गुलुः ॥ सैंधवं द्विगुणं दत्त्वा मूषामध्ये रसं क्षिपेत् ॥२५६॥ मूषालेपे प्रदातव्यं दग्धशंखादिचूर्णकम् ॥ मूषां तस्य दृढं बध्वा लोहमृत्तिकया पुनः ॥२५७॥ कारयेच्च सुधालेपं छायाशुष्कं च कारयेत् ॥ युक्तो निगडबंधोऽयं पुत्रस्यापि न कथ्यते ॥२५८॥

(टो. नं.)

अर्थ–थूहर तथा आक का दूध, ढाक के बीज, गूगल और सेंधानोन इस सबको पारद से दूना लेकर मर्दन करे। उस निगड तथा पारद को मूषा में रखे। मूषा के लेप के लिये चूने आदि का प्रयोग करना चाहिये और लोहे मे मैल से पारद की मूषा को दृढ़ बंदकर फिर चूने का लेपकर छाया में सुखावे। इस निगडबंध की क्रिया को अपने पुत्र को भी नहीं कहना चाहिये॥२५६–२५८॥

अन्यच्च

स्नुह्यर्कसंभवं क्षीरं ब्रह्मबीजानि गुग्गुलुः ॥ सैन्धवं द्विगुणं दत्त्वा मर्दयित्वा

विचक्षणः ॥२५९॥ पिष्टवेष्टनकं कृत्वा कल्केनानेन सुंदरि ॥ बिल्वप्रमाणां कुरुते मूषामतिदृढां शुभाम् ॥२६० ॥ ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मूषा मध्ये रसं क्षिपेत् । मूषालेपं प्रदातव्यं दग्धशंखादिचूर्णकम् ॥२६१॥ मूषां तस्य दृढां बध्वा लोणमृत्तिकया पुनः । कारयेच्च सुधालेपं छायाशुष्कं तु कारयेत् ॥२६२॥ तुषकरीषाग्निना भूमौ मृदुस्वेदं तु कारयेत् । अहोरात्रं त्रिरात्रं वा पुटं दत्त्वा प्रयत्नतः ॥२६३॥ एवं मूषा महेशानि रसस्य खोटतां नयेत् । खोष्यतां खदिरांगारै रसेन्द्रं खोटतां नयेत् । उक्तो निगडबन्धोयं पुत्रस्यापि न कथ्यते ॥२६४॥ (नि० र०)

अर्थ–थूहर तथा आक का दूध, ढाक के बीज, गूगल और पारद की अपेक्षा दूना सेंधा नोन मिलाकर मर्दन करे और हे प्यारी पार्वती! इसी कल्क से मूषा के बाहर लेप करे। मूषा बेल के समान लंबी चौड़ी और दृढ़ होनी चाहिये। ऊपर और नीचे नोंन लगाकर घरिया में पारद को रक्खे और जलाये हुए शंखादि के चूने से मूषा पर लेप करना चाहिये। पारद की मूषा को नोन और मिट्टी से दृढ़ बाँधकर अर्थात् लीप कर फिर चूने का लेप करे और सुखावे तदनंतर तुषा तथा कर्सी की आंच से पृथ्वी पर दिन रात या तीन दिन कुक्कुट पुट देकर यत्नपूर्वक कोमल स्वेदन करे, हे पार्वती! इस प्रकार मूषा पारद को खोट बनाती है कि जब उस पर खैर के कोयलें गलायें जायें, यह कहा हुआ निगडबंध पुत्र को भी न कहना चाहिये॥२५९–२६४॥

अन्यच्च

स्नुह्यर्कसम्भवं क्षीरं ब्रह्मबीजानि कोकिला । कनकस्य तु बीजानि लोहाष्टांशेन मर्दयेत् ॥२६५॥ लवणं टंकणं क्षारं शिलातालकगन्धकम् । तथाऽम्लवेतसं ताप्यं हिंगुलं समभागकम् ॥२६६॥ स्नुह्यर्कपयसा युक्तं पेषितं निगलोत्तमम् । पिष्टिका वेष्टयेच्चानेनैकेन निगलेन तु ॥२६७॥ तेषां मूषागतं पक्वं खोटं कृत्वा तु वेधयेत् ॥२६८॥

(नि. र.)

अर्थ–थूहर का दूध, आक का दूध, ढाक के बीज, कोयल और धतूरे के बीज, इनको अष्टमांश लोहे के साथ मर्दन करे फिर नोंन, सुहागा, यवक्षार, मैनसिल, हरताल, गंधक, अमलवेत, सोनामक्खी और सिंगरफ को थूहर तथा आक के दूध से घोटे तो यह उत्तम बनता है। इस एक ही निगड से पारद की पिष्टी को लपेटे और उन से बनाई हुई में रस परिपाक करे तो पारद खोट होता है॥२६५–२६८॥

अन्यच्च

पलाशबीजं निर्यासं कोकिलोन्मत्तवारिणा । शूलिनीरससंयुक्तं पेषयेत्सैन्धवान्वितम् ॥२६९॥ पिष्टकावेष्टनं कृत्वा निगडेन तु बन्धयेत् । मूषायां निगडे देवि लेपितं शिवशासनात् । रसस्य परिणामोऽयं महावह्नौ स्थिरो भवेत् ॥२७०॥ (नि. र.)

अर्थ–ढाक के बीज, ढाक का गोंद, कोयल और सेंधा नोंन को धतूरे के रस और शूलिनी (हींग) के रस मे मर्दन करे और इसी निगड से पारे की पिष्टी को लपेट कर निगडयुक्त मूषा में बंद करे और मूषा में उसी निगड का लेप भी करे तो श्रीशिवजी की आज्ञा से पारद का यह परिणाम होता है कि वह पारद अग्निस्थायी हो जाता है॥१६९–२७०॥

अन्यच्च

द्वितीयं निगडं वक्ष्ये पिष्टिकाबन्धमुत्तमम्। द्विपक्षीरसमूत्रेण सैंधवाभ्रं च गुग्गुलुम् ॥२७१॥ पिष्टिं संवेष्ट्य कल्केन मूषा तु पुनरष्टधा । तुषीकरीषाग्निना भूमौ मृदु स्वेदं तु कारयेत् । अहोरात्रं त्रिरात्रं वा पूर्ववत्खोटतां व्रजेत् ॥२७२॥ (नि. र.)

अर्थ–अब मैं दूसरे निगड को कहता हूं जिससे कि पारद पिष्टी का उत्तम रूप से बन्धन होता है। सैंधव, अभ्रक तथा गूगल को वनबेरिया के रस से अथवा गोमूत्र से घोटकर उस कल्क से पारद की पिष्टी पर लेप कर फिर मिट्टी से आठ बार लेप करे। तदनतर उस गोले को भूधरयंत्र में रखकर करसी की आंच से दिनरात या तीन दिन तक मृदु स्वेदन करे तो पारद खोट होता है॥२७१॥२७२॥

अन्यच्च

वाकुची ब्रह्मबीजानि गगनं विमला मणिः । सौवर्चलं सैंधवं च टंकणं गुग्गुलं तथा ॥२७३॥ द्विपक्षीरजसा मूत्रं सुधाम्लं च प्रमर्दयेत् । पिष्टीं संवेष्ट्य कल्केन पूर्ववत्खोटतां नयेत् ॥२७४॥ (नि. र.)

अर्थ–बावची, ढाक के बीज, अभ्रक, सोनामक्खी, मोती, स्याहनोंन, सैंधव, सुहागा और चूना इनको स्त्री के रज से तथा गोमूत्र से मर्दन करे। फिर उसी कल्क से पारद की पिष्टी को लपेटकर पूर्वोक्त प्रक्रिया से मृदु स्वेदन करे तो पारद खोट होता है॥२७३॥२७४॥

अन्यच्च

अभ्रकं पद्मपत्रेण वज्रार्कक्षीरसीधुना । तापेन लोहकीटेन सिकतामृन्मयेन च ॥२७५ एतैस्तु निगलैर्बद्धः पारदीयो महारसः । नातिक्रामति मर्यादां वेलामिव महोदधिः ॥२७६॥ (नि. र.)

अर्थ–अभ्रक को कमल के रस से, थूहर और आक के दूध से, कांजी से, सोनामक्खी से, लोहे की कीट से भस्म करे। उससे बद्ध हुआ पारद जिस प्रकार समुद्र अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ता है, उसी प्रकार अपनी जगह को नहीं छोड़ता है अर्थात् उड़ता नहीं है॥२७५॥२७६॥

निगड बनाने की तरकीब (उर्दू)

अबरक, नमक, सेंधा, सोनामक्खी, बालूरेत, लोहे का मैल इनको आक और थूहर के दूध में एक पहर खूब खरल करके रख ले। इसमें से भी पारा नहीं उड़ सकता (सुफहा खजाना कीमियां १६)

अन्यच्च

तैलार्कक्षीरवाराहीलांगल्या निगलोत्तमम् ॥२७७॥

(नि. र.)

अर्थ–तिल, बाराहीकंद, लांगली, (कलिहारी या जलपीपल) को आक के दूध से घोटे तो उत्तम निगड होता है॥२७७॥

अन्यच्च

काकविड्ब्रह्मबीजानि कुक्कुटास्थीनि सुन्दरि ।
सामुद्रं सांभरं चैव लवणं निगलोत्तमम् ॥२७८॥

(नि. र.)

अर्थ–कौवे की बीट, ढाक के बीज, मुर्गी के अंडो की सफेदी, समुद्र नोंन, साम्हर तथा सैंधव को घोटकर रख ले तो उसका उत्तम निगड बनता है॥२७८॥

अन्यच्च

स्वर्णभागं भवेदेकं द्विगुणं मृतभास्करम् । रसकं पञ्च भागाश्च षड्भागा निधौतमृत् ॥२७९॥ आटरूषजले पिष्ट्वा संपुटं तेन कारयेत् । मूषां च रचयेत्सत्यं रसस्य निगडो भवेत् ॥२८०॥ वह्निमध्ये न गच्छेत पक्षच्छेदीव तिष्ठति । काचकूपी द्वितीया च तृतीयो लोहसंपुटः ॥२८१॥ (टो. नं.)

अर्थ–एक भाग सोना, दो भाग ताम्रभस्म, पांच भाग रसक (रस खपरिया) और छः भाग धुली हुई मिट्टी को अडूसे के रस में पीसकर उसका संपुट बनावे फिर उस मूषा में पारद का स्वेदन करे तो रस का निगड होता है वह पारद अग्नि में उड़ता नहीं है और परकटे हुए की तरह रहता है। प्रथम मूषा द्वितीय काचकूपी (शीशी) और तीसरा लोहसंपुट करना चाहिये। यह निगडयंत्र कहाता है॥२७९–२८१॥

उपरोक्त क्रिया का पुनः अनुभव

(१) ता० १०/२/१९०४ तो ऽ॥ सेर उत्तम सिंग्रफ रूमी को करीब दो प्रहर के खट्टे और जंभीरी के रस में खरल किया गया लेकिन न सूखने के कारण यंत्र में बंद न किया (आज गिरधारीलाल वैद्य ने आकर मुलतानी को मूंज की रस्सी के खुले हुए बान से मला तो मुलतानी बहुत जल्द मिल गई)

(१) ता० ११/१ आज उक्त सिंग्रफ को जो करीब करीब सूख गया था थोड़ा डौरुयंत्र में बंद करके कपरौटी कर दी गई और हांडी के नीचे लोहा लगा दिया गया। यह हांडी वही है जिनमे पहले सिंग्रफ उड़ाया जा चुका है बवजह देर हो जाने के आज यंत्र चूल्हे पर नहीं चढ़ाया गया।

(२) आज १ सेर सिंग्रफ रूमी और लेकर उसको नींबू के रस में घोटा गया (आज २ और हांडी में जो गिरधारीलाल वैद्य ने भेजी थीं उनको घिसकर उनका मुंह मिलाया गया)

(१) ता० १२/४ आज उक्त ऽ॥ सेर सिंग्रफ को आंच दी गई १० बजे से ६ बजे तक हांड़ी चटक गई इस वास्ते उसके नीचे से आंच निकाल दी गई (हांडी जो गिरधारीलाल ने भेजी थी उनमें एक हांडी पर से छोकरकी तह मुलतानी से चढ़ा दी गई)

(१) ता० १३/१ सुबह को डौरू जो रात को चटक गया था खोला गया तो ९॥ तोले पारा निकला और बहुत सा पारा सिंग्रफ में रह गया (चटक जाने से कुछ माल खारिज नहीं हुआ) (एक नई बात देखी गई कि चटकी हांड़ी के पेंदे में एक गोलाकार चक्र में कुछ सिंग्रफ चिपटा हुआ रह गया उसको छुटाया गया तो वह नम निकला उसकी गोली सी बंधती थी यह न मालूम हुआ कि कौन चीज पिघलकर तर हो गई थी)

(२) ता० १४/१ आज सबेरे उक्त १ सेर सिंग्रफ को ९ बजे से रात के ८ बजे तक ११ घंटे आंच दी गई।

ता० १५/१ को खोला तो १५ तोले पारा निकला। आंच बहुत थोड़ी लगती है, इस कारण पारा अच्छी तरह नहीं उड़ता। अतएव आज चूल्हा बड़ा बनाया गया ओर इस तरह पर कि आंच सब तरफ जलती रहे (आज ऽ॥ सेर सिंग्रफ) सात नीबुओं के रस में घोटा गया।

१६/१ चूंकि आज चूल्हा सूखा नहीं था, इस कारण कर्म बंद रहा (कल का ऽ॥ सेर सिंग्रफ ही कुछ देर घोटा गया)

(१+२)। ता० १७/१ को ऽ॥ सेर सिंग्रफ व+१ सेर सिंग्रफ को जिसमें से ९॥ तोले व १५ तोले पारा निकल चुका था फिर सूखा घोट आज सुबह १० बजे से शाम के ८ बजे तक आंच दी गई तो २६ तोले पारा और निकला अभी और पारा बाकी है।

अबकी बार आंच भी तेज दी गई, चूल्हा भी बड़ा था, हांडी पर ३ कपरौटी थी, उपर की हांडी बड़ी थी और उस पर गोबर रखा गया और पानी का भीगा कपड़ा भी रखा गया।

(३) ता०२०/१ को १ सेर सिंग्रफ और लेकर नीबू के रस में खूब घोटकर और सुखाकर ता० २१/१ को ११ घंटे आंच दी गई तो १५ तोले पारा निकला।

(१+२)) ता० २२/१ को उपरोक्त ऽ१॥ सेर सिंग्रफ को जिसका दोबारा आंच दी जा चुकी थी और जिसमें से५०॥ तोले पारा निकल चुका था सूखा ही करीब १ घंटे घोटा गया बाद को आज ता० २३/१ को कुछ कम ४ प्रहर की आंच दी गई तो २२॥ तोले पारा और निकला।

(३) ता० २३/१ को उपरोक्त १ सेर सिंग्रफ को जिसमें से १५ तोले पारा निकल चुका था उसको सूखा ही इकट्ठा घोट कर ४ प्रहर की आंच दी गई तो १७॥ तोले पारा निकला।

ता० २५/१ को (१+२+३) उक्त ऽ॥ सेर + १ सेर+ १ सेर सिंग्रफ को जिसमें से (५०॥+२२॥+१५+१७॥=१०५॥ तोले पारा निकल चुका था उसको सूखा ही थोड़ा घोट कर ४ प्रहर के करीब आंच दी गई तो ३१॥ तोले पारा और निकला आंच आज पूरी दी गई मानी ३ मामूली लकड़ियों की।

(४) २६/१ को ऽ।=ढ़ाई पाव सिंग्रफ और लेकर उसको सात नीबू के रस में करीब १ प्रहर के घोटकर और सुखाकर दूसरे दिन डौरू में ८॥ बजे सवेरे से आंच दी गई ४ बजे शाम के हांडी चटकने की आवाज हुई जिसके कारण आंच बन्द कर दी गई—खोला गया तो १२॥ तोले पारा निकला और बहुत सा पारा बाकी रह गया आज के कर्म से अनुभव हुआ कि, ७ घंटे की आंच किसी तरह काफी नहीं है, ४ प्रहर की आंच होना चाहिये और चूंकि कल पारा अधिक निकला था, उससे अनुभव हुआ कि ज्यादा माल रखने और करीब ४ प्रहर के आंच देने ओर आंच भी तेज अर्थात् ३ पतले चहले की देने से पारा ठीक निकलता है—आज जो हांडी चटकी थी उसको साफ करके देखा गया तो मालूम हुआ कि उसके पेंदे में बाल पड़ गया था किन्तु पारा उस ओर जारी नहीं हुआ था और न कुछ हानि हुई थी इससे फिर भी अनुभव होता है कि अगर हांडी चटकने पर आंच बन्दकर दी जावे तो पारद के एकदम निकल जाने का भय उड़ाने का भय उड़ाने में नहीं है लेकिन हांडी नीचे की हो। आज हांडी को आंच अवश्य चार या पांच लकड़ी की दी गई थी और कपरौटी सिर्फ ३ ही की थी। हांडी तोड़ने से यह भी पाया गया कि हांडी के नीचे पेंदें में करीब आधी मुटाई तक श्यामता आ गई थी गालिबन यहां तक पारा प्रवेश कर गया था।

(५) २९/१ ऽ।=ढ़ाई पाव सिंग्रफ ओर लेकर उसको ७ नीबू के रस में करीब दो प्रहर खरल कर मुका ३ लकड़ियों की करीब ४ प्रहर आंच दी गई, खोलने पर १८॥ तोले पारा निकला।

२९/१ (१+२+३+४+५) ऽ॥ सेर+ १ सेर+ १ सेर १+ ऽ। = ढाई पाव + ऽ। = ढाईपाव ऽ३॥। सेर सिंग्रफ जिसमें से १४९॥ तोले पारा निकल चुका था उसको सूखा घोट कर करीब ४ प्रहर के आंच दी गई तो २३ तोले पारा निकला।

३०/१ (१ २ ३ ४ ५) ऽ॥ सेर १ सेर १ सेर १ ऽ। ढ़ाई पाव ऽ। ढ़ाई पाव ऽ३॥। सेर सिंग्रफ, जिसमें ४९ तोले पारा निकल चुका था उसको सूखा घोटकर करीब ४ प्रहर आंच दी गई तो २३ तोला पारा निकला।

३१/१ (१+२+३+४+५) ऽ॥ सेर+१ सेर+१ सेर+ऽ।=ढ़ाई पाव+ऽ।= ढ़ाई पाव=ऽ३॥। सेर सिंग्रफ जिसमें से १९१ तोले पारा निकल चुका था उसे फिर सूखा घोटकर॰ आंच दी गई तो २४॥ तोले पारा निकला अबकी बार बहुत सूक्ष्म पारा शेष रह गया अर्थात् जो कुछ शेष रहा चूर्ण की दशा में रहा चकती की सूरत न रहीं कुल वजन पारे का २१५ तोले ६ माशे अर्थात् २ सेर ११ छ० ६ माशे हुआ ६ तोले पीछे से और निकला यानी ३॥। सेर सिंग्रफ में से सब २ सेर १२ छ० १ तोले ६ माशे पारा निकला और पहले सिंग्रफ में से ३ छटांक निकला था।

कुल २ सेर छटांक १ तोले ६ माशे हुआ।

अब शेष सिंग्रफ के चूर्ण को जिसमें से ऽ२॥ऽसेर १॥ तोला पारा निकल आया था फिर ३ प्रहर की आंच दी गई तो ६ तोले पारा बाकी नहीं रहा। चूर्ण जो शेष रहा उसकी सूरत सफेद कत्थे की सी हो गई और वजन में १ छटांक हुआ लेकिन इसमें जो मैला ९ माशे था उसको पृथक कर लिया गया, उत्तम स्वच्छ ९ माशे की शीशी में, रखा गया और मध्यम ३॥ तोले को अलग रखा गया।

ॐ शिवाय नमः

स्वेदन संस्कार

संस्कार अध्याय के ७२ से ७६ वें श्लोक तक की क्रिया से।

आज ४ फरवरी सन् १९०४ बृहस्पति वार फाल्गुन बदी तीज को २०० तोले पारद हिंगुलाकृष्ट को स्वेदन में डाल ।|आने गज की मारकीन १ गज को चार तहकर और उसमें ढाई ढाई छटांक सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, राई, सैंधानोंन, अदरख, मूली, इन आठ चीजों को कूट छान कांजी में उसने उसकी ओखरी सी बना उसको कपड़े चौतह में रख उसमें पारा भरा तो पारा ओखरी के नीचे निकल गया लाचार पारे और दवा की लुगदी को चौतह कपड़े में बांध उसकी पोटली बनाई गई लेकिन बहुत बड़ी हुई चकोतरे की बराबर और हांडी का मुंह छोटा था इसलिये चौथाई के करीब लुगदी निकाल पोटली बांध सन की सुतली से बांस की खपच्च में लटका एक हांडी में जो गोल थी और जिसमें १८ सेर कांजी आई बीचो बीच लटका दोलायंत्र किया गया ऊपर हांडीके सरवा ढ़का गया। जो सब लुगदी रखते तो बिलांद भर चौड़े मुंह की २५ सेर पानी वाली हांडी की जरूरत होती।

(१० बजे के करीब जब पारद को स्वेदन के लिये लेकर चले तो पैर टेढ़ा पड़ने से कमरे की सिढ़ी पर से गिरते गिरते बच गये श्रीशंकर ने रक्षा की नहीं तो बड़ी चोट आती।)

१२ बजे दोपहर से इसके नीचे मंद आंच दी गई। कांजी कम होने पर दो दफे कांजी शाम तक डालनी पड़ी—जब जब कांजी कम हुई और डालते रहे। इतबार के १२ बजे तक अर्थात् तीन दिन रात बराबर आंच दी गई। बाद में कुछ ठंडा होने पर पोटली निकाल खोला गया तो पारा नीचे था और लुगदी ऊपर, हां कुछ रवे पारेके जो लुगदी में मिला दिये थे (मिलाना तो चाहा था कि सबही मिल जावें पर मिला नहीं था) दोलायंत्र करते वक्त वह कांजी के अन्दर भी थोड़े से मौजूद थे—पारे को जो खुद अलहदा कपड़े में छानकर तोला गया तो ≤२।॥। दो सेर साढ़े छः छटांक निकला लुगदी को उसी गरम कांजी से धोया गया और नितारा गया तो पारे के बारीक रेजे इकट्ठे हुए इनको छाना गया तो भी ये बाहम इकट्ठे नहीं हुए फिर इनको चीनी की रकाबी में सुखा दिया गया तो सबेरे वह रवे हिलाने से आपस में मिल गये तोलने से यह छटांक भर बैठे अर्थात् स्वेदन में आधी छटांक पारा छीज गया बाकी रहा ≤२।≡।

स्वेदन का अनुभव

१–द्रव वस्तु जिसमें स्वेदन हो, मैंने कांजी में किया सो ठीक ही था। और का अनुभव करने पर दूसरा हाल ज्ञात हो सकता है। कांजी २०० तोले पारद के स्वेदन के लिये मन भर तो चाहिये जितना जल आदि में चढ़ाया जाता है उतना ही और तीन दिन में जलाने की वजह से डालना पड़ता है।

२–औषधी जिनके संग स्वेदन हो। आठ वस्तु जो मैंने ली है वह साधारण रीति से बहुत मतों से ग्राह्य है किन्तु मैंने मूली को पीसकर डाला था उसका रस ही औषधियों में डाला जाता तो ठीक होता और सब औषधी निहायत बारीक कपरछन होनी चाहिये। इन औषधियों को स्वेदन में डालने के लिये मतान्तर बहुत हैं।

१ कांजी में डालना, २, पोटली में डालना, ३, कपड़े पर लेप करना, ४ गोला बना उसमें पारा रखना, ५ मूषा बना उसमें पारा रखना किन्तु नागबला आदि के प्रयोग में अर्थात् किसी लसदार वस्तु में तो मूषा बनना सम्भव है और इन औषधियों से मूषा बनना असंभव है और गोला बनाकर पारा भरना तो सर्वथा असंभव है क्योंकि पारा भारी होने से उसे भेद जाता है। लेप भी गफ कपड़े पर ठीक नहीं हो सकता और फिर फिरफिरे पर किया भी जावे तो गीले में पारा निकल जायेगा और सूखने पर लेप तड़का जावेगा।

पोटली बांधना संभव है, किन्तु पोटली में जब यह औषधियां पारद से पृथक रहती है तो कांजी में इन औषधियों के डालने में भी कुछ हानि नहीं जान पड़ती और सुगमता अधिक है। यदि पोटली से लाभ हो तो इतना हो सकता है कि कांजी में डालने से औषधी का रस जब कांजी में मिल जायेगा और पोटली में रहने से उसका रस प्रथम पारे पर गिरेगा फिर जल में मिलेगा।

३–दोलायंत्र, हांडी, स्वेदन के लिये चौड़े मुंह की होनी चाहिये जिसमें बड़ी पोटली आ जावे और चूंकि पोटली बड़ी होती है, इस लिये हांडी का पेट भी बड़ा होना चाहिये। २०० तोले के लिये २५ सेर जल की हांडी योग्य है। इसके मुंह पर सरवा ढ़का रहना चाहिये और हांडी के किनारे छांद उसमें बांस की खपच्च रख उसमें रस्सी का छींका लटका उसमें पोटली रखनी चाहिये।

४–आंच इसके नीचे बहुत मंदी दीपक अग्नि के समान लगनी चाहिये।
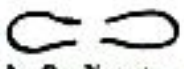
५–धोने में गरम कांजी से धोने से पारा कम छीजता है (ठंडे जल से धोना मना है और उससे पारा छीजता भी अधिक है)

मर्दन संस्कार

(अष्टम संस्काराध्यायश्लोक १३४ से १५६ श्लोक की क्रिया से)

तारीख १० फरवरी सन् १९०४ फाल्गुन बदी ९ बुधवार १० बजे से तप्त खल्व द्वारा मर्दन संस्कार प्रारम्भ—रसरत्नाकर की क्रिया से।

पुरानी पक्की ककैया ईंट का चूरा और हल्दी समान भाग मिलाकर दोनों मिलकर सोलहवां अंश अर्थात् ढ़ाई छटांक को खरल में डाल उसमें जंभीरी का रस और बिजोरे का रस जल और पारद १९७॥ तोले डालकर रात के ७ बजे तक मर्दन किया गया रस कम होने पर और डाला जाता रहा। जंभीरी १० ही मिली। वह भी सूखी सिर्फ पाव भर से कम रस निकला—३ बिजौरों में कोई १ तोला ही रस निकला (कारण कुऋतु होने से ताजी बिजौरे न मिले थे) लाचारी में नींबू का रस काम में लाया गया।

तप्त खल्व के लिये १ लंबा चूल्हा बनाकर जो ⊂⊃ इस आकार का था और चार या पांच अंगुल ऊंचा था और जिसमें ४ अंगुल नीचे गढ़ा भी कर लिया था उस पर लोहे का खरल रख नीचे बकरी की मेंगनी और गेहूं के भूसे की आंच जलाई गई खरल इतना गर्म रखा गया जिसमें हाथ से खरल छू सकें—और जिसका मूसला भी गरम मालूम होता था।

ता० ११ फरवरी बृहस्पतिवार आज प्रातः ९ बजे से मर्दन आरम्भ होकर रात के ७ बजे तक किया गया ८ बजे से आरम्भ होकर रात के ८ बजे तक कर्म चलता है किन्तु वास्तव में १० घण्टे मर्दन होता है।

ता० १२ फरवरी आज भी ८ बजे से रात के ७ बजे तक तप्त खल्व में मर्दन हुआ। इन तीन दिन के मर्दन में ५ सेर नींबू जो गिनती में १२० थे, उनका रस पड़ गया।

ता० १३ फरवरी आज खरल से पारद जुदा किया गया। पारद स्वयं जुदा ही था वह तोला गया तो २।≡) हुआ और जो रवे लुगदी में मिले थे उनको निकालने के लिये सब लुगदी को तप्त कांजी में घोल नितारा और धोया गया तो १ छटांक पारा और निकला कुछ बहुत सूक्ष्म रवे रह गये उनको रकाबी में सुखा दिया गया तो वह भी इकट्ठे हो गये—सब पारा ≤२॥ सेर में १ तोला कम हुआ।

स्वेदन की तोल में कुछ गड़बड़ हो गई होगी अबकी बार दो दफे तोला गया तो १ तोला कम २॥ सेर पारा बैठा।

मर्दन का अनुभव

१–इष्टिका और रजनी (हल्दी) के चूर्ण मिलकर पारद से १६ वां अंश होना ही ठीक है। पाठ से भी ऐसा ही अर्थ निश्चय होता है और यही उचित भी जान पड़ा। पृथक पृथक लेने से पारद की अपेक्षा बहुत अधिक प्रमाण हो जाता है। मैंने पहले पृथक पृथक सोलहवां अंश लिया।

२–इन रसों में घोटने में नींबू का रस इतना डाला गया जिससे कढ़ी सी हो गई कम डालने से हाथ ठीक नहीं चल सकता था और पीछे तो इसमें

गया। यह दवा चीनी के कटोरे में करके रख दी गई क्योंकि नत्था नौकर छुट्टी पर जाने वाला था। कुल दवा ११ छटांक २ पैसे भर थी।

१४/६ आज इस दवा के बराबर के टुकड़े कर यानी ५।। छटांक १ पैसे भर एक डौरु में और इतनी ही दूसरे डौरू में बंदकर दी गई। डौरू दोनों नये थे, जोड़ खूब चकले पर घिसकर मिला दिया गया था कपरौटी कैंची मारकीन की एक ९ बजे मेरे सामने और एक दोपहर बाद नत्था नौकर ने कर दी।

१५/६ आज हांडी को आंच देना आरम्भ किया तो तेज खुशबू फैली। इस ख्याल से कि डौरु टूटा तो नहीं उसको आंच से उता दूसरा डौरू रख दिया गया। ८ बजे इस डौरु में भी वैसी ही गंध निकली तब यह ख्याल करके कि दोनों डौरू टूटे नहीं हो सकते, आंच दी जाती रही। आज ६ बजे शाम तक दी गई मंदी आंच पतली डेढ लकड़ी की लगी।

१६/६ आज डौरु खोला गया तो ऊपर की हांडी में १ छटांक पारा निकला और नीचे की हांडी में १।। छटांक पारा निकला। सब पारा २।।) छटांक में से ।) कम हुआ और पारा था ६ छटांक १।।)=छटांक ३।।।)=२ छ० ४।) निकला २ छटांक २। छटांक घटा २) राख १।। छटांक रही थोड़ा २ बहुत होगा।

१६/६ जो डौरु १५ तारीख को घंटे भरम पीछे ही उतार कर रख दिया गया था उसको आज खोला गया तो उसमें कोई खराबी नहीं दीख पड़ी। कुछ पारे के रवे ऊपर उड़कर पहुँचे थे और नीचे की हांडी में दवा में पारे की रंगत और डलियांसी पैदा हुई थी। इस डौरू को फिर ज्यों का त्यों बंद कर दिया गया।

१७/६ आज इस डौरू को ६।। बजे से ५ बजे तक मंदी आंच दी गई मगर पहले कुछ तेज बबूल की अंगूठे सी पतली डंडियों की आंच दी गई।

१८/६ आज डौरु खोला गया तो कुछ कम १ छटांक पारा ऊपर की हांडी में और कुछ कम १।। छटांक नीचे की हांडी में निकला। सब पारा २ छटांक २) भर हुआ और था $\frac{६छ० १।।}{२}$ = ३ ।।।) भर लिहाजा २।) छ० घटा–राख १।।) छटांक है।

2nd part

२/६ हरिद्राकोल क्रिया से सब आधी आधी छटांक और सब चीज उपरोक्त २९/५ के अनुसार ले मिला घंटे भर घोटी गई।

३/६ आज इसमें ५ छ० और २ पैसे भर पारा डाला गया तो शीघ्र ही मिल गया। ६ घंटे घुटा। शीत खरल में घीग्वार का रस पड़ा।

४/६ आज ७ घंटे घुटा–घीग्वार का रस पड़ा।

५/६+६ घंटे घुटा–गाढा हो जाने से छोड़ दिया। खूब मूर्च्छन हो गया।

६/६ से यह दवा खरल में सूखती रही। शीशे के बक्से में तौल में बंद नत्था के ब्याह की वजह से काम बंद रहा।

१८/६ को आधी दवा को जो ५।। छटांक थी, डौरू में बंद कर दिया गया।

१९/६ को ७ बजे से ५ बजे तक मंद अग्नि दी गई। बबूल की डंडियों की दिन भर एक सी।

२०/६ आज डौरू खोल गया तो ऊपर की हांडी में १ छटांक+१।।) भर और नीचे की हांडी में १छ० ।)भर पारा निकला। कुल पारा २ छटांक ३ पैसे भर हुआ था डाला गया था ५ छटांक + २ पैसे= २।। छ० २ पैसे भर २।। पैसे भर घटा।

२०/६ आज बाकी आधी दवा को दूसरे डौरू में बंद कर दिया गया।

२१/६ आज डौरु को ७ बजे से ५ बजे तक मंदाग्नि (जिसको मशाल की अग्नि कहना उचित होगा) बबूल की डंडी दी गई।

२२/६ डौरु खोलने के ऊपर की हांडी में १ छटांक और नीचे की १ छटांक ३ पैसे भर पारा निकला। नीचे की हांडी की गर्दन पर कुछ रवे थे और बहुत सा यानी करीब १ छटांक पारा एकत्र नीचे की हांडी में मिला ४ दफे के पातन में भी ऐसा ही हुआ अर्थात् नीचे की हांडी में बहुत सा पारा एकत्र मिलता रहा। गालिबन ख्याल यह है कि ऊपर नीचे की हांडी समान होने से पारा ऊपर की हांडी में ठहर नहीं सकता। नीचे गिर जाता है। हांडी जो ४ बार काम में ली गई वह इतनी बड़ी थी जिनमें ५ सेर पानी आ जाता था और इनमें तीन तीन छटांक के करीब पारा चढाया गया। आगे से ऐसा

हिसाब रहे तो ठीक होगा कि नीचे की हांडी तो इसी अन्दाज से रहे लेकिन ऊपर की हांडी दुगुनी बड़ी हो अर्थात् प्रत्येक छटांक पारे के लिये नीचे की हांडी १।। से पानी वाली हो और ऊपर की हांडी ३ सेर पानी वाली हो यानी ५ छटांक पारे के लिये ७।। सेर पानी की नीचे की हांडी और १५ सेर पानी की ऊपर की हांडी हो, दोनों हांडियां चपटी हों, बड़े किनारे की हों, छोटी हांडी में पारे के भाप एकत्र न होकर नीचे गिर पड़ती है और कुछ बाहर भी निकल जाती है (देखो २८ जून के थोड़े पातन की कामयाबी को) पारा मिलाकर तोलने से २ छटांक ३ पैसे भर हुआ डाला गया। २ छ० ५।। पैसे भर यानी पैसे भर घटा। ठीक इतना ही पहले घटा था। राख १।। छटांक थी।

२४/६ चारों दफे की राख को इकट्ठा कर पातन किया तो ।।) भर पारा और निकला।

२८/६=१।।) भर पारा जो छूटकर बाकी रह गया था उसे फिर दवा में घोट मूर्च्छन कर पातन किया तो १।।)भर निकला।

पातन का अनुभव

(१) हांडी का रूप मनादि ऊपर कह चुके हैं तदनुसार ग्रहण करे।

(२) हांडी की संधि चकले पर घिसकर मिलाई जावे और नीचे की हांडी पर चार चार कपरौटी कर ली जावें।

(३) दवा भरकर डौरू के जोड़ की संधि (वज्रमुद्रा से न कर) कैंची की मारकीन और मुलतानी की जावे जो एक बार में दोहरी आ जावे इसके सूख जाने पर दूसरी ऐसी ही पट्टी और चढा दी जावे।

(४) डौरू के जोड़ की पट्टी खूब सूख जाने पर डौरू आंच पर चढ़ाया जावे।

(५) आंच बबूल की डंडी की मन्दी मन्दी अर्थात् एक मसाल की बराबर दी जावे। तीव्र अग्नि बहुत हानिकारक है, तीव्र अग्नि से ही दोबारा पातन में आधा पारा उड़ गया।

(६) पातन के समय पर ऊपर की हांडी पर गोबर का घिरोला बांध बीच में खाली रख मोटा चौहरा कपड़ा डाल खूब पानी से तर रखा जावे।

(७) यह अभी पूर्ण निश्चय नहीं हुआ है कि थोड़ा थोड़ा पातन करने में छीजन अधिक होगी या कम क्योंकि तोले दो तोले छीजना एक बार में सामान्य बात है यदि छटांक छटांक में २ तोले छीजे तो भी बहुत ही होता है।

(८) २८ जून के १।। तोले के पातन में छीजन बिलकुल न आने से निश्चय होता है कि थोड़ा थोड़ा ही पातन ठीक है क्योंकि जगह पूरी मिलने से पारे की भाप अच्छी तरह जमा हो सकी, उड़ी नहीं।

(९) यह बात भी विचारणीय है कि पहले साधारण पारद के परमाणु

स्थूल होने से वह कम छीजता था। अब पारद के शुद्ध हो जाने से परमाणु सूक्ष्म हो गये होंगे। इस कारण उनका क्षय होना अधिक संभव है।

नकशा पातन का

जो ११ छटांक ।।) भर पारद १ बार पातित को पुनः पातन करने से हुआ।

तारीख पातन	पारा जो डाला गया	पारा जो छूट गया	पारा जो ऊपर की हांडीमें मिला	पारा जो नीचे कीहांडीमें मिला	कुल पारा दोनों हांडियों का	घटी	विशेषवार्ता
१६/६/०५	२ छ० ५)	।।।)	१ छ०	१ छ० २)	२ छ० २।)	–२)	इस बार अग्नि कुछ तेज लग गई
१८/६	२ छ० ५)	।।।)	१ छ० से कम	१ छ० ।)	२ छ० २)	–२)	
२०/६	२ छ० ३)	+	१ छ० १।।)	१ छ० १।।)	२ छ० १।।।)	–१।)	
२२/६	२ छ० ३)	+	१ छ० ।)	१ छ०+१)	२ छ० १।।।)	–१।)	
	११ छ०१)	१।।)	४+१।।)	५ छ०+१)	९ छ० २।।।)	–६।।।)	
२४/६	चारों दफे की राख को पुनः पातन किया तो ।।) पारा और निकला–						
२८/६	१।।)	+	१।।)	+	१।।)		
	११ छ० १)				९ छ० ४।।।)	१ छ० १।)	
२८/६/०५	समग्र तोलने से पातित पारा १ सेर १ छटांक ८) भर हुआ–						

जय श्री शंकर स्वामी की

प्रथम प्रकार से बोधन संस्कार

(संस्काराध्याय श्लोक ३०५ से ३०६ तक की क्रिया से)

त्रिफलं सैंधवं चूर्णं जलप्रस्थत्रयं तथा । धारयेद्घटमध्ये च सूतकं दोषविसर्जितम् । रुद्ध्वा तस्य मुखं सम्यङ् मर्दितं मृत्स्नया कुरु । निवाते निर्जने देशे धारयेद्दिवसत्रयम् ॥

(धा० सं० प० ३०)

२९/६ की शाम को एक घड़े में (जिसमें १२ सेर पानी आता था) ६।। सेर पानी और १ सेर सैंधानोंन डाल और सब पारा डाल शकोरे से मुंह ढक मुलतानी और कपरौटी से दर्ज बंद कर दी गई और घड़े को चीनी की नांद में रख ऊपरवाले खाने में रख ताला लगा दिया।

३/७ ४ दिन बाद आज सबेरे घड़ा मँगवाया गया तो घड़े के ऊपर के आधे भाग पर सफेदी छा गई थी और घड़ा बरफ की तरह नजर आता था। वास्तव में लवण घड़े के बाहर निकल कर जम गया था जो कहीं कहीं सफेद परातों में छूट सकता था। घड़ा खोल पारा तोला गया तो १ सेर १ छ० ३।। रुपये भर ही हुआ अर्थात् ठीक हुआ। आगे नत्था नौकर के भाई के मर जाने से काम बंद रहा।

२२/७ संस्कृत पारे पर सोने का वरक डाल कर देखा गया तो वरक तुरंत पारे में जज्ब हो गया किन्तु दूसरे पारे पर जो हिंगुलाकृष्टस और दो बार पातित था, डालकर देखा गया तो वहां भी यही दशा थी और करीब करीब यही दशा केम्पकों से आये पारद पर दीख पड़ी, इससे ज्ञात हुआ कि पारद षंढ ही है।

दूसरे प्रकार से बोधन

(संस्काराध्याय श्लोक २८२ की क्रिया से)

कर्षणेनैव नपुंसकत्वं प्रादुर्भवेदस्य रसस्य पश्चात् । वस्त्रकर्पाय च दोलिकायां स्वेदो जले सैंधवचूर्णगर्भे ॥

(र० चिं० ११)

२३/७ उक्त १ सेर १ छ० ३ रुपये भर पारे को कैंची की मार्कीन की (एक तहती पोटली में बांधा गया किन्तु झटका लगने से पारे के रवे कुछ नीचे निकल गये इसलिये) दो तह की पोटली में बांध पोटली को सूत की सींक बराबर मोटी डोर से बांधकर एक मटके में जिसमें २५ सेर पानी आता। २० सेर पानी भर ३ सेर सैंधा नमक डाल उसमें लटका दिया गया और मटके को भट्टी पर ७ बजे से रख मंदाग्नि देना आरम्भ किया। ८ बजे मटका चटक गया। लाचार आंच बंद कर दी गई पर दोला उसी प्रकार स्थित रहने दिया गया। शाम को ४ बजे ठंडा हो जाने के कारण पारद की पोटली निकाल ली गई। मटके पर लेहा वा कपरौटी न थी इस कारण और ३ मटके मंगवाकर १ पर लेहा चिकनी मिट्टी का जिसमें एक तह कपड़े की भी थी, लगाया गया। बाकी २ हांडियों पर मुलतानी से दो दो कपरौटी कर दी गई। पीछे उन दो हांडियों से एक पर तीसरी कपरौटी और कर दी।

२७/४ आज लेहा लगी हांडी में वही पानी औट और जितना पानी पहली हांडी पी गई थी उतना पानी और डाल और ऽ।। सेर नमक और डाल ७ बजे से अग्नि दी गई। ८ बजे के करीब यह हांडी भी चटक गई तुरंत दूसरी हांडी कपरौटी करी बदल कर अग्नि जारी रखी गई । २ बजे यह हांडी भी कुछ चटकी लेकिन नत्था ने वहीं थोड़ा कपड़ा और मुलतानी लगा काम जारी रखा। अवश्य यह बड़ी मटकी खराब मिट्टी की बनी है जो अग्नि नहीं सह सकती। दोलायंत्र के लिये भी उत्तम मिट्टी के बर्तन तैयार कराने चाहिये।

७ बजे शाम तक यह काम जारी रखा। एक घड़े में ५ सेर जल और ऽ।। सेर नमक भर रख छोड़ा था जब पानी की जरूरत हुई उसमें से पड़ता रहा। दिन भर में ४ सेर पानी पड़ गया। रात को ७ बजे आंच बंद कर दी गई। १० बजे रात को देखा तो खूब गरम था। सबेरे ६ बजे देखा तो कुछ गुनगुना अब तक भी था।

२५/७ आज ७ बजे से फिर उसी मटकी के नीचे आंच जलाई गई। आधसेर नोंन और डाल दिया गया। (नमक हांडी को भेदकर बाहर आ गया है) घड़े में १ सेर पानी पहला बचा था और १ सेर पानी और ऽ। पाव भर नमक और डाल रख छोड़ा। उसमें से पानी पड़ता रहा। रात के सात बजे तक आंच दी गई। बाद में आंच बंदकर मिट्टी पर ही छोड़ दिया। प्रातःकाल तक पानी गुनगुना था।

२६/७ (आज सबेरे देखा गया तो मटकी पर नमक बहुत निकल आया था) इस मटकी को बदलकर नई ३ कपरौटी करी मटकी चढ़ाई गई (खाली हुई मटकी को देखा तो नमक ने कपरौटी को हांडी से जुदा कर दिया था,

पैसे भर सुर्ख गंधक की भस्म पेंदे में निकली। (हांडी की संधि स्वामीजी के समक्ष में उत्तम रीति से की गई थी) यानी १० तोले में इस समय ३ तोले ही वजन रह गया या तो गंधक का ही भाग इस १० तोले में था सो जल गया अथवा पारा डौरुयंत्र में से सन्धि द्वारा निकल गया, ५ पैसे भर जो काली चीज निकली उसमें पारा नजर नहीं आता था, उसको खूब नींबू में घोट धूप में रखा गया तो पारे के कण दीख पड़े। दुबारा फिर नींबू के रस में भिगो धूप में रखा गया तो वैसा ही रहा। इसको इष्टिका यन्त्र में आंच दी गई तो तोल कुछ घटी पर कुछ नतीजा न निकला, लाचार फेंक दिया। दरअसल पारा इसमें बहुत ही कम था।

स्वर्णभस्म करना व उत्थापन

पहली बार की चन्द्रोदय की क्रिया में जो शीशी के पेंदे में गंधक और स्वर्ण की काले रंग की ७॥ तोला जली हुई चीज निकली थी उसमें से ३ तोले को कांच के टुकड़े पर थोड़ा थोड़ा रख कोयलों पर रखा गया तो गंधक जलकर उड़ गई और १ तोला बाकी रहा। (सुर्खी-मायल)

३॥ तोले बाकी रहे को कचनार की छाल के काढ़े में घोट टिकिया बना सुखा शराव संपुट में रख ५ सेर आरने कंडों की आंच दी गई तो काले रंग की टिकिया १=) भर निकली। यानी सब ७॥ तोले का जलकर २=) भर रहा। इसमें १) भर स्वर्ण और बाकी गंधक, पारा, घीकुमारी का अंश समझना चाहिये।

उत्थापन

इस २=) भर भस्म में से।) भर शहद सुहागा घी मिलाकर घरिया में रख धोंका तो उसमें से ९ रत्ती स्वर्ण निकला।

भस्मीकरण

बाकी १॥।=) भर को खूब बारीक पीस कचनार के काढ़े में घोट टिकिया बना सुखा संपुटकर ५ सेर कंडों की आंच दी गई तो १॥।=) भर निकला। दुबारा फिर इसको कचनार के काढ़े में घोट ७ सेर की आंच दी गई तो १॥) भर निकला, रंग सुर्खी मायल है। फिर तिबारा ।।) भर गंधक शुद्ध मिला कचनार के काढ़े में घोट ५ सेर कंडों की आंच दी गई तो १॥)भर ही निकला रंगत सुर्ख टिकिया मुलायम थी, फिर चौथी बार ।।)भर ही गंधक मिला कचनार में घोट १० सेर कंडों की आंच दी गई तो १॥ भर ही निकला, मगर ज्यादा आंच लग जाने से आधी टिकिया जलकर कठिन और काली हो गई, स्वर्णभस्म में ५ सेर कंडों से अधिक आंच देना मुनासिब नहीं है जो टिकिया मोटी होने से कच्ची निकले तो आंच न बढ़ाकर एक की जगह दो टिकिया दो संपुट में रखो।

पांचवी बार ॥)भर गंधक मिला कचनार क्वाथ में घोट ५ सेर कंडों की आंच दी गई टिकिया खूब चौड़ी खूब खस्ता निकली रंगत थोड़ी सुर्खी मायल थी तोल १॥) भर थी।

छठी बार सिर्फ कचनार के काढे में घोट ४ सेर कंडों की आंच दी गई तो १॥)तोले निकली रंगत कम सुरख थी।

७ वीं बार ३॥ सेर कंडे १॥)भर निकला, रंगत उमदा सुर्ख थी।

८ वीं बार २॥ सेर कंडों की आंच दी गई पीसने से रंगत सुर्ख थी, पर सोने की रंगत के रवे बहुत चमकते थे लिहाजा यह ठीक नहीं फुका इसको फिर फूकना चाहिये यह जिलाना चाहिये—चूंकि तोल कुशते की सोने के वजन से बढ़ गई थी और रवे चमकते थे बस इस ख्याल से इसका जाने क्या चीज मिल गई सोना जिलाना ही ठीक समझा गया।

१८/२—शहद, सुहागा, घी डालकर न्यारिये से धुकवाया गया तो ९ आने पर सोना निकला, लेकिन रंगत सफेदी माइल थी और सोना फूटक हो गया था पहला सोना जो शीशी में से निकलने के बाद निकाला गया था वह फूटक नहीं था इसलिये ख्याल होता है कि गंधक से फूटक हो गया।

चन्द्रोदय का तृतीय अनुभव दत्तमटिरिया मेडिका की क्रिया से

१७/१०/०४–८ तोले हिंगुलोत्थ एक बार साधारण मूर्छित किया हुआ पारा १६ तोले शुद्ध गंधक को २ दिन घोट सूक्ष्म कज्जली बना ७ कपरौटी की हुई आतिशी शीशी में भर पूर्वोक्त विधि से वालुकायंत्र में चढाया गया किन्तु डाट मुख पर रख दी गई संधि बंद नहीं की गई थी।

२१/१०—आज ६ बजे से सबेरे ९ बजे तक मंद, १२ तक मृदु, अनंतर साधारण तीव्र आंच दी गई ९ बजे शीशी कुछ गरम हुई, १२ बजे कुछ धुआं और डाटपर गंधक की रंगत आने लगी और शीशी की गर्दन में तार डालने से मालूम हुआ कि गंधक कुछ गर्दन के इधर उधर चढ़ा है। ३ बजे तक इस दशा में कुछ अंतर न दीख पड़ा, ३ बजे से आंच पूरी तीव्र कर दी गई—३॥। बजे शीशी में खूब धुआं निकला और ५ मिनट में शीशी के मुख से नीली ज्वाला निकलने लगी जो एक बालिश्त से भी ऊंची होगी, ५ मिनट में वह ज्वाला कम पड गई फिर भी शीशी के मुख से लो निकलती रही और कुछ गंधक गर्दन से नीचे बह कर आती थी उससे नीचे तक ज्वाला जलती थी, रंगत ज्वाला की नीली थी इस समय कुछ आंच मंदी कर दी गई कि गंधक तीव्र वेग से न जल जाय, पोन घंटे तक गंधक जलती रही फिर बंद हो गई, जिसका कारण या तो अग्नि की मंदता या गंधक की क्षयता हो सकती है, आंच बंद हो जाने पर ५॥ बजे तार डालकर देखा गया तो गंधक शीशी की नाल में पिघला हुआ हुआ मौजूद था, अनंतर आंच तीव्र की गई परन्तु फिर गंधक न जली, ६ बजे तार डाला गया तो शीशी का मुख बंद था तार केवल १ अंगुल अन्दर हो गया, खूब जोर देकर देखा गया तो भी तार अंदर न गया, किसी चीज से खूब बंद था ६॥ बजे तक आंच दी गई, न तो फिर गंधक जला न धुआं निकला, तार डालने से शीशी के मुख पर कठोरता और खुश्की जान पड़ी यह विचारा कि समय पूर्ण हो गया, और गंधक जल गई आंच बंद कर दी गई रात्रि भर शीशी भट्टी पर ही रही।

२२/१० शीशी ठंडी हो गई थी तोड़ कर देखा गया तो गर्दन के ऊपर के भाग में २॥। भर अर्ध ज्वलित गंधक काले पीले रंग की, उसके नीचे बीच गर्दनमे ४॥।≈भर कुछ पारद अंश से मिश्रित गंधक सुर्खी माइल काले रंग की निकली उसके नीचे गर्दन के निचले भाग में ४ भर गंधक से मिश्रित सुरखी मायल काले रंग का निकला, गर्दन से नीचे शीशी के ऊपर भाग में केवल मूर्च्छितपारा ३॥≈भर निकला इसकी रंगत सिंग्रफ की सी थी लकीर करने से खूब सुरखी निकलती थी तले में शीशी के थोड़ी सी राख गंधक की निकली।

नतीजा यह जान पड़ा कि ८+१६ भर गंधक पारद में से १६ भर माल रहा, यानी आधी गंधक जली, तरकीब जो दत्तमेटरिया ने लिखी है ठीक ही है यह गंधक का कम जलना हमारी क्रिया की कचाई थी गंधक जलने पर हमने आंच डारकर कम कर दी थी और पहले भी आंच के तीव्र करने में बहुत देर की थी, मेरी राय में १ प्रहर मंद आंच देकर दूसरे प्रहर में मध्यम अग्नि देनी चाहिये और तीसरे प्रहर से पूरी तीव्र अग्नि कर देनी चाहिये और चौथे पहर के अन्त में शीशी उतार लेनी चाहिये।

चन्द्रोदय का चतुर्थ अनुभव

२३/१०–४॥।=) भर पारद अंश से मिश्रित गंधक ४) भर गन्धक से मिश्रित पारद को जो तृतीय अनुभव में से निकला था। खूब घोट एक छोटी आतिशी शीशी में जिस पर ७ कपरौटी थी भर छोटे तौले में वालुका यन्त्र पर धरा।

२४/१०–७ बजे से सबेरे से आंच दी गई १० बजे तक शीशी गरम हुई १२ बजे सलाई डालकर देखा गया तो पारद गन्धक पिघली हुई दशा में मिले हुए थे और शीशी भर रही थी ३ बजे गंधक शीशी की गर्दन में आ गया था परन्तु पिघला हुआ था ४॥ बजे शीशी का मुंख गंधक ने रोक दिया सलाई अन्दर से न गई ६ बजे तक आंच और दी गई गंधक शीशी के मुख से

जौ भर नीचे तक आकर रह गया न ऊंचा सरका न जला गंधक न जलने का कारण यह मालूम होता है कि पहले शीशी में जल चुकने की वजह से गंधक कमजोर हो गई थी।

२५/१०—शीशी को देखा गया तो शीशी पिघल कर ऊपर को सिकुड़ गई थी पर कपरौटी शीशी के आकार की कायम थी, शीशी तोड़ी गई तो गर्दन में ऊपर १॥ भर गंधक अर्द्ध जालित, बीचमें २=) भर गंधक पारद मिश्रित नीचे ७॥=) भर पारद गंधक मिश्रित, सबसे नीचे कुछ मर्दनमें कुछ बोतलमें १॥=) भर पारद मूर्छित जिसकी रंगत कुछ काली थी, निकला सब तोले ८।=) भर रखा गया था, ८॥ भर रस सिर्फ ।)भर जला, ३ प्रहर की आंच में भी केवल ।)भर जलना आश्चर्य है, इससे ज्ञातहोता है कि अन्तर्धूम में गंधक का क्षय कठिन है, बहिर्धूम में गंधक शिखारूप से जलकर ही क्षय हो सकेगा और तरह नहीं।

शीशी आतिशी मामूला काम न देगी, १ पिघल कर फूट गई, १ सुकड़ गई इसलिये अंगरेजी आतिशी शीशी लेना ठीक होगा, या सारां की शीशी बनवाई जावे।

गंधक जारण का अनुभव बहिर्धूम

स्वामी रामेश्वरानंद द्वारा रसेन्द्र चिन्तामणि में कहे बहिर्धूम जारण की क्रिया से "सूतप्रमाणं सिकताख्ययंत्रे दत्त्वा बलिं मृद्घटतैलपात्रे ॥ तैलावशेषेऽत्र रसं निदध्यान्मल्लाईकायं प्रविलोक्य भूयः" ॥

१०/१० बालुका यंत्र में स्थित एक छोटे से चीनी करे मलसे में तैल और गंधक को मिलाकर चढाया तो तेल जल गया और गंधक रह गया तैलावशेषे का अर्थ होता है कि तैल बाकी रहे, इससे सिद्ध हुआ कि पाठ अशुद्ध है, तैलावरूप ही होना चाहिये।

११/१० आज उसी बालुकायंत्र में उसी छोटे मलसे को रख उसमें १ तोला गंधक का चूर्ण डाल आंच दी गई तो घंटे भर में गंधक तेलरूप हो गई फिर उसमें पारा १ तोला डाल दिया गया। ९ बजे सवेरे से १२ बजे तक आंच देने पर थोड़ा ही क्षय हुआ। मल्लाईकाय नहीं हुआ। १२ बजे अननंतर घंटे घंटे भर पीछे २–२ माशे गंधक डाला गया तो शाम के ६ बजे तक १ तोला गंधक क्षय हुआ अर्थात् सवेरे से शाम तक १ तोला १। तोला गंधक यह हुआ होगा।

बालुकायंत्र १ तोला मिट्टी का था [illegible] जिसमें सूक्ष्म बालू रखी गई थी यानी मलसे के नीचे कोई अंगुलभर ही बालू होगी, कूल्हेपर रखकर दो तीन लकड़ियों की आंच बराबर दी गई, शाम तक २० सेर लकड़ी जली होगी इससे सिद्ध हुआ कि बहिर्धूम गंधक जारण में भी जो बालुका यंत्र से होगा देर लगेगी किन्तु हो सकता है अधिक पारे के गंधक जारण में खूब चौड़ा बालू का बर्तन लेकर उसमें चौड़े पेंदे की रकाबी रखना ठीक होगा।

६ बजे एक लंबी कील से चलाकर देखा गया तो पारा बीच में कुछ घन रूप था और ऊपर काली गाढ़ी गंधक थी, तजुरबे के लिये आंच खूब तेज की गई तो गंधक में आंच लग गई, उसको शराव (सकोरे) से ढक दिया तो अग्नि बुझ गई, यंत्र उतार लिया गया।

१२/१० सवेरे देखा गया तो पारा गंधक में मिला हुआ रांग की सी आकृति कठिन हो गया था, शायद बालुका यंत्र में स्थित दशा में कील से चलाने से गंधक में मिल गया हो, फिर इस पारे गंधक की नींबू के रस से घोटा गया तो ६ माशे पारा पृथक् हो गया बाकी पारा मूर्छित रूप में ही था, पारा क्षय नहीं हुआ।

इष्टिकायंत्र से गंधकजारण का अनुभव

१२/१० कुहरेनाथ के यहां बनी खांचेदार ईंट में अर्थात् इष्टिका के गढ़े में चीनी बर्तन के टुकड़े भुना सुहागा, चूना कलई सब समान भाग खरल में जल के साथ घोट लेप कर सूखा कर १॥ तोले पारा डाल ऊपर से १॥ तोला गंधक चूर्ण डालकर उलटा शकोरा ईंट के मुख पर ठीक लगाकर, कुम्हार की मिट्टी मुलतानी, रुई कूटकर उससे दरज बंद की गई और सुखा दी गई। घंटे भर सूखने से दराज खुल गई उस दराज को चीनी चूने सुहागे से बंदकर फिर सुखाया गया। कपड़े से ढककर तो संधि नहीं खुली, इस ईंट के ऊपर सेर सेर भर कंडों के ४ पुट लगाये गये।

१३/१० आज ईंट खोली गई तो गन्धक केवल पिघला हुआ मिला, जला नहीं पारा नीचे विद्यमान था।

(२) दुबारा फिर ईंट को सकोरे से बंदकर ईंट को २ हिस्से जमीन में गाड़ कर (गढ़े में पानी भी छिड़क लिया था) एक भाग खुला रख ५ सेर आरने कंडों की आंच दी गई, खोलने पर गंधक बिल्कुल न मिला अर्थात् जल गया, पारा सफेद चमकता हुआ बहुत साफ १॥ तोले पूरा मौजूद था, यह पुट ४–५ घंटे में ठंडा हुआ था। ईंट में कुछ दर्ज पड़ गई थी, ईंट बहुत मोटी और गढ़ा बहुत बड़ा है इस कारण से ५ सेर का पुट लगा। शायद इससे कम से भी काम चल जावे उसका अनुभव फिर होना चाहिये, बालुकायंत्र में गंधक निःशेष अग्नि जल उठने पर भी नहीं हुआ था और गंधक निःशेष पारे को शकोरों में रख कोयलों को ऊपर नीचे रख गंधक में अग्नि पैदा की गई तो गंधक जल गया किंतु निःशेष नहीं हुआ। इसलिये दोनों क्रिया (बालुका और शकोरा) में गंधक का मैल सा रह जाने से पारा मैला रहा, हर इष्टिकायंत्र में गंधक निःशेष हो जाने से पारा बड़ा स्वच्छ निकला इसमें इष्टिकायंत्र द्वारा गंधक जारण उत्तम कहा जा सकता है।

(३) २८/१० चन्द्रोदय के द्वितीय अनुभव से निकले २—) भर गंधक पारद को पीसकर इष्टिकायंत्र में रख ४ सेर कंडों की आंच दी गई तो १।) भर निकला, रंग थोड़ी सुरख थी।

(४) और २॥८) भर गंधक पारद को आंच दी गई तो १॥) भर निकला। रंगत विशेष सुरख थी। इन दोनों में से जो गंधक था वह जल गया। केवल पारद ही अब समझना चाहिये क्योंकि तोल मिलाने से पारद ही पूरा बैठता है। इष्टिकायंत्र से पारद गंधक पृथक् पृथक् भी अच्छी तरह से जारण हुए थे और मूर्च्छित रूप में भी जो अबकी बार परीक्षा की गई तो बहुत अच्छा नतीजा निकला था।

(५) उपरोक्त नं० ३+४ को मिलाकर फिर इष्टिकायंत्र में आंच दी गई तो दोनों उड़ गये। कारण यह कि गंधक पहले ही क्षीण हो चुका था। आयन्दः यह भी ख्याल रखा जावे कि गन्धक क्षय हो जाने से पारद उड़ सकता है।

(६) १ तोला परा १ तोला गंधक की कजली कर इष्टिकायंत्र में आंच दी गई तो नतीजा ठीक नहीं हुआ।

इष्टिकायंत्र द्वारा गंधकजारण का पुनः अनुभव

२७/०२/०६ उक्त प्रकार के इष्टिकायंत्र के गर्त के बीच में पारद पिष्टी ५॥)भर (जिसके बनाने की विधि पीछे लिखी है) रख उसके ऊपर जंभीरी के रस में पिसी गंधक १॥)भर की पिष्टी सी रख ऊपर शकोरा ढक संधि को भस्म मुद्रा से बंद कर दिया गया।

भस्ममुद्राप्रकार

कारीषभस्मलवणांबु वज्रमुद्रा प्रकीर्तिता

मैंने लकडी की राख ली थी १॥)रुपये भर और उतना ही सैंधा नमक डाल खरल में पानी के साथ खूब घोटा गया इसी से मुद्रा की गई, यह क्रिया भी मुद्रा की उत्तम रही।

२८/२ जमीन में गड्ढा कर इष्टिकायंत्र रख जो जमीन से ३ या १ इंच के करीब नीचा रहा होगा ऊपर ३ अंगुल रेत भर आध आध कंडों की आंच ५ दी गई। शाम को ठंडा होने पर निकला तो ~~मालूम हुआ कि आंच~~ का असर नहीं पड़ा गंधक बिलकुल नहीं जला।

तोले निकला। ८ माशे घटा।

सम्मति—कोयले बढ़ाये जावें और जल्दी जल्दी आंच दी जावे। आध सेर कोयलों की आंच हर घंटे पर लगनी चाहिये।

नं० ३५ कच्छपयंत्र
उपरोक्त क्रिया का पैंतीसवीं बार अनुभव
(लोहपात्र में)

ता० २८ से ३० तक पूर्वोक्त २ माशे पारद और १८ तोले पारद गंधक को लोहे की कच्छप में रख हलकी लोहकटोरी से ढ़क भस्ममुद्रा कर उसी जल भरी बालटी पर (जिसमें इस बार किनारे पर एक पनाला करीब ८ अंगुल लंबा इस वास्ते लगाया गया था कि पानी कम हो जाने पर उसमें होकर पानी अंदर पहुंच जाय और कच्छप बालटी से उठाना न पड़े) रख पाव पाव भर कोयलों की ३ आंचे और ऽ। की १ और आध आध सेर की ११ कुल १५ आंचे ५ प्रहर में दी गईं। बाद को जैसे का तैसा पानी पर रखा छोड़ दिया। सवेरे देखा तो कुछ गर्म था और पानी पेंदे से हट गया था इसलिये दो पहर को खोला तो १॥ माशे पारद और १७ तोले ४ माशे गंधक पारद निकला ८॥ माशे घटा।

नं० ३६ कच्छपयंत्र
उपरोक्त क्रिया का छत्तीसवीं बार अनुभव
(लोहपात्र में)

ता० ३१ से २/९/०७ तक पूर्वोक्त १७ तोले ४ माशे पारद गंधक और १॥ माशे पारद को लोहे के कच्छप में रख हलकी लोहकटोरी से ढ़क भस्ममुद्रा कर उसी बाल्टी पर (जिसमें इस बार मिट्टी भर ४ अंगुल खाली रख केवल ४। सेर पानी भरा गया था) रख ७ बजे से ऽ। सेर की फिर ८ बजे से ऽ॥ की आंच हर घंटे पर लगाई गई। ६ बजे तक सब १२ आंचें लगीं तो पारद गंधक १७ तोले १ माशे निकला। ४॥ माशे घटा।

सम्मति—अग्नि पूरी दी गई फिर भी गंधक का क्षय नहीं हुआ न अग्नि कम है न जल अधिक है। समझ में नहीं आता है कि क्या कर्तव्य है।

पारद उत्थापन
कच्छपयंत्र से निकले पारद गंधक का डौक द्वारा पातन
प्रथम बार

ता० १९ से २३/९ तक २७ वें कच्छप का ३ तोले १ माशे और पैंतीसवें कच्छप का १७ तोले १ माशे कुल २० तोले २ माशे को जिसमें १४ पारा और ६ तोले के करीब गंधक है किन्तु वास्तव में सब ३५ तोले के करीब गंधक पड़ा था जिसमें से ६ तोले रह गया है, रोगनी हांडियों में रख डौक कर भस्म मुद्रा से बंदकर कपरौटी कर सुखा दिया। दो दिन रखा रहा।

ता० २२ को भट्टी पर १ प्रहर मंदाग्नि और ३ प्रहर समाग्नि दी। ऊपर भीगा कपड़ा डाला गया बाद को चूल्हे पर रखा छोड़ दिया।

ता० २३ को सवेरे खोला गया तो ऊपर की तमाम हांडी में उड़ा हुआ काले रंग का गंधयुक्त मूर्छित पारद लग रहा था। (क्रिस्टल रूप में)। यह ऊपर काला था और नीचे श्वेत सा था, इसको निकाला तो ३ तो० १ माशा हुआ, इसमें में से पारा न निकल सकता था। नीचे की हांडी में ६ तोले ५ माशे दवा डिम्मे की शकल की काले रंग की थी यानी ऊपर नीचे की हांडियों की कुल दवा १२ तोले ४ माशे निकली। ७ तोले ९ माशे छीजन गई। गंधक विद्यमान् रहने से इसमें पारे का कुछ भी अंश पृथक् हाथ न लगा और न प्रत्यक्षरूप में दीख पड़ा।

उपरोक्त पारद गन्धक का द्वितीय बार पातन

ता० २४/९/०७ को पूर्वोक्त १२ तोले ४ माशे पारद गंधक को पीस उन्हीं हांडियों में फिर डौककर भस्म मुद्रा से बन्द कर कपरौटी कर सुखा दिया।

ता० २५ को ६ बजे से समाग्नि दी—३ बजे खुद जाकर देखा तो गंधक की गंधक आने की शंका हुई। इस वास्ते डौक चटक जाने की शंका से ३ बजे काम बंद कर दिया और हांडी को उतार लिया।

ता० २६ को सवेरे खोल देखा गया तो हांडी चटकी न थी, ऊपर की हांडी में २ तोला ११ माशे गंधकयुक्त पारद निकला। (इसका रंग प्रथम बार की भांति काला न था, श्वेतता लिये था) जिसमें पारे के परमाणु दीखते थे। किन्तु पृथक् न हो सका। नीचे की हांडी में ६ तोले ४ माशे ललाई लिये काली दवा मिली यानी कुल ९ तोला ३ माशे वजन निकला। ३ तोले १ माशे छीज गया।

सम्मति—६ तोले गंधक की जगह १० तोले १० माशे तोल घट चुकी फिर भी पारा पृथक् नहीं हुआ।

शंका—क्या बंद यंत्र में गंधक विद्यमान रहते भी पारा उड़ता है और खुले में नहीं।

अनुमान से समाधान—अवश्य उड़ता है, नहीं उड़ता तो शीशी में गंधयुक्त पारद की नाल उड़कर न जमती।

उपरोक्त पारद गंधक का तीसरी बार पातन

ता० २६/९ को पूर्वोक्त ९ तोले ३ माशे पारद गंधक को पहली भांति फिर डौक में बंद कर दिया।

ता० २९ को पहली ४ प्रहर की अग्नि दी।

ता० ३० को सवेरे खोला तो ऊपर की हांडी में बेसनी रंग की भस्म में मिले पारद के रवे दीख पड़े जो इकट्ठा करने पर ३ तोले हुए। ६ माशे पारद नीचे की हांडियों में निकला। दोनों हांडियों का पारा तोल में ३ तो० ६ माशा हुआ और नीचे की हांडी का चूर्ण (जो श्वेततायुक्त ताम्रवर्ण का सा था) ४ तोलें ३ माशे और पारा छानने से निकला ४॥ माशे कुल ४ तोले ७॥ माशे चूर्ण निकला। (९ तोले ३ माशे वजन में) ८ तोले १॥ माशे हाथ लगा—१ तोले १॥ माशे छीज गया।

सम्मति—गंधकयुक्त पारद के पातन में पहली बार पारद गंधक का अंश अधिक रहने से काले रूप में उड़कर जमा था और बहुत सा भाग बेउड़ा ही रह गया होगा। दुबारा पातन में गंधक का अंश कम रहने से श्यामता घट कर सफेदी आई। तीसरी बार गंधक बहुत कम रह जाने से पीतता दीख पड़ी अर्थात् जब तक ऊपर की हांडी में श्याम रहे जान लो कि गंधक का क्षय नहीं हुआ—गंधक का क्षय होने पर क्रम से सफेदी और पीतता उत्पन्न होती है। (अनुमान है कि अन्त में रक्तता होती होगी)

उपरोक्त पारद गंधक का चौथी बार पातन

ता० ३/१० को पूर्वोक्त ४ तोले ७॥ माशे दवा को पहली ही भांति डौरू में बंद कर दिया।

ता० ८ को ४ प्रहर सामान्य अग्नि भट्टी पर दी।

ता० ९ को खोला तो (ऊपर की हांडी में पारे के रवे दीख पड़ते थे और बहुत हलकी पीली झलक युक्त श्वेत भस्म सी हांडी पर छाई हुई थी) ८ माशे पारा ऊपर की हांडी में निकला—नीचे की हांडी में पारा बिलकुल नहीं था। ४ तोले ७॥ माशे में से ४ तोले ५ माशे हाथ आया। २॥ माशे छीजन गई।

उपरोक्त पारद गंधक का पांचवी बार पातन

ता० ११/१०/०७ को पूर्वोक्त ३ तोले ९ माशे पारद गंधक को पहली ही भांति डौरू में बंद कर दिया।

ता० १२ को ७ बजे से रात के ९ बजे तक भट्टी पर समाग्नि दी गई। ऊपर भीगा कपड़ा डाला गया बाद को जैसे का तैसा रखा छोड़ दिया।

ता० १३ के सबेरे खोला तो २॥ माशे पारा और २ रत्ती कम ३ तोले ६ माशे हलके कत्थई रंग की राख निकली।

सम्मति—इस २ रत्ती कम ३॥ तोले राख में आधी यानी १ रत्ती कम १ तोले ९ माशे राख को, मोटे मिट्टी के चिरागों के किनारे घिसे संपुट में भर भस्ममुद्रा कर कपरौटी सुखा दिया। फिर ता० १७ को ५ सेर कंडों की आंच दी गई तो १तोले ४ माशे राख करीब २ पहले से ही रंग की निकल आई जो भूरखरी और कत्थई रंग की थी—यह बात निश्चय करने योग्य है कि जब पारद और गंधक दोनों आक्षेप हैं तो फिर यह क्या चीज बाकी रह गई।

जौनपुर की अलकीमिया कमेटी के बने पातन यन्त्र अर्थात् चीनी फिरे मिट्टी के डौरू द्वारा पारद उत्थापन का अनुभव (प्रथम भाग)

ता० २०/५ को बाजारी पारेका इष्टिका यंत्र से गंधक जारण के अनुभव में उत्पन्न हिंगलू १ तोले ११ माशे को चिनी फिरे पातनयंत्र में रख दो भाग सैंधव और एक भाग राख से बनी भस्ममुद्रा से संधि बंद कर ऊपर से मारकीन की २ कपरौटी कर दी गई और यंत्र सूखने को रख दिया गया।

ता० २१/२२ को फुर्सत न मिलने की वजह से यंत्र रखा रहा और सूखता रहा।

ता० २३ को ७ बजे से ३ बजे तक उँगली सी पतली बबूल की डंडियों की ऐसी मंदाग्नि दी गई जो पेंदे में ही लगी और ऊपर भीगा कपड़ा रखा गया। बाद को आंच अलग कर जैसे का तैसा गर्म चूल्हे पर रखा रहने दिया।

ता० २४ को खोला गया तो ॥=) ४ रत्ती पारा और १ तोले राख निकली। ८ रत्ती छीजन गई, पारा कुछ नीचे के पात्र की गर्दन में लगा हुआ मिला।

विचार—अग्नि मंद रही, कुछ विशेष होनी चाहिये थी। यद्यपि यंत्र की संधि बहुत ढीली और अनमिल थी किन्तु इस भस्म मुद्रा के कारण पारा संधि से बाहर निकला न दीख पडा। अनुभव आशा जनक हैं।

उपरोक्त क्रिया का दूसरी बार अनुभव (द्वितीय भाग)

ता० २५/५ को हकीम मुहम्मद यूसफ साहब की चाये की क्रिया का जो पारा जड़िया में मिला रह गया था, उस ५। तोले को पीस बारीक कर पातनयन्त्र में रख केवल पानी और गोंद के पानी के साथ घुट नमक के कुश्ते से दोनों पात्रों को जोड़ धूप में रख दिया, ७ बजे से ३ बजे तक सुखाया। बाद को मुलतानी की कपरौटी कर फिर धूप में सूखने को रख दिया।

ता०२६ को१ प्रहर मंदाग्नि जो पेंदे में ही लगी और ३ प्रहर कुछ अधिक अग्नि दी, बाद को आंच बंद कर यन्त्र को ज्यों का त्यों गर्म चूल्हे पर रखा रहने दिया।

ता० २७ को पानी डाल डाल जोड़ खोलना चाहा परन्तु न छूट सका तो उक्त यन्त्र को पानी भरी नांद में रात भर पड़ा रहने दिया।

ता० २८ के सुबह को पानी से निकाल खोला तो जल्द खुल गया, थोड़ा सा पानी यन्त्र के अन्दर चला गया था, अतएव पानी निचोड़ सुखा पारे को छूटा तोला तो १–) भर निकला, ऊपर के डौरू में अधिक और नीचे के डौरू की गर्दन में थोड़ा था, नीचे के पात्र में जो भीगा डिम्मा सा मिला उसको भी सुखा तौला तो १॥ तोले हुआ, इसमें पारद बहुत थोड़ा हो तो हो।

विचार—नमक के कुश्ते की (निष्केवल) मुद्रा अधिक कड़ी हो जाती है, बाहरी जोड़ पर हो तो हो भीतर कभी न करनी चाहिये। यह यन्त्र जोड़ पर खांचेदार था और इसमें खांचे के भीतर भी भस्ममुद्रा दी गई थी, भीतर पानी न पहुँचने से कठिनता से खुली। यह मुद्रा खराब संधियों में भी पारद को रोकती है।

उपरोक्त क्रिया का तीसरी बार अनुभव

ता० ३०/५/७ को खांचेदार छोटे डौरू में धोयेवाले पारे का १ तोले ७ माशे सफूफ और १॥ तोले पहले डौरू की बची राख कुल ३ तोले १ माशे वजन रख साधारण नमक में मिली हुई तिहाई भाग राख से बनी भस्ममुद्रा से अन्दर बाहर कर बंद कर दिया और १ घंटे भर सूखने पर २ कपरौटी टुकरी कर दी गई।

ता० ३१ को यह यन्त्र धूप में सूकता रहा।

ता० १/६ को खोला गया तो संधि पर पानी डालकर खुल गया, ऊपर के पात्र में ७ माशे पारा मिला। कुछ दो चार रवे नीचे के पात्र की गर्दन में मिले। १ तो० ९ मा० राख निकली अर्थात् ३ तोले १ माशे वजन में कुल २ तोले ४ माशे वजन मिला। ९ माशे छीजन गई।

सम्मति—नमक के कुश्ते की मुद्रा खोलने में कठिनता करती है और साधारण नमक की मुद्रा सरलता से खुल जाती है और काम वैसा ही देती है, इस कारण खांचेदार जोड़े में तो अवश्य साधारण लवणमुद्रा ही करनी चाहिये।

उपरोक्त क्रिया का चौथी बार अनुभव (तृतीय भाग)

ता० ३०/५/०७ को साधारण मध्य शुद्ध पारद की इष्टिकायंत्र में समान गंधक जारण से उत्पन्न (११/२) ५॥ तोले पिष्टी (जिसमें ५ तोले पारद था) को पीस जौनपुर वाले बिना खांचे के बड़े डौरू में बन्द कर दिया गया, इस डौरू के किनारों पर भी कांच फिरा था, इसलिये वे घिसे न गये और उनके बीच में जो मोटी संधि रहती थी वह नमक के कुश्ते और समान अंश राख से बनी भस्ममुद्रा से अन्दर बाहर बंद कर टुकरी की दो कपरौटी कर दी गई।

ता० ३१ को यह यंत्र धूप में सुखा दिया गया।

ता० १/६ को यह यंत्र रखा रहा।

ता० २ को १ प्रहर मंदाग्नि और ३ प्रहर समाग्नि दी गई।

ता० ३ को यह यंत्र संधि पर डालकर खोला गया तो शीघ्र खुल गया, ऊपर के पात्र में २ तोले ८ माशे पारा और नीचे के पात्र में ३ माशे यानी कुल २ तोले ११ मा० पारा निकला। १ तोले ५ माशे राख निकली, १ तोले

पारदभस्म जस्तयोग से (वेधक ताम्र का सोना)

जस्तदी डब्बी आठ तोले, पारा आठ तोले, मेंहदी दे पाणी में खरल करके धो डालना फिर पारा डब्बी में पाकर उपरों महेंदीदा पाणी भर देना उस डिब्बी को पेठे में देकर बंदकर ऊपरों भूरेंदी टाकी से तीन कपड़माटी करके सुखाकरा गजपुट दैणी खिल हो जायगी उसको ताम्रपर पाणा (जंबू से प्राप्त पुस्तक)

कुश्ता सीमाब बजरियः रांग (उर्दू)

सीमाब दो तोले, कलई दो तोले, रोगन सरसों ८ तोले को किसी कढ़ी आहनी में डाले और इसमें सीमाब डाले और ऊपर कलई डाल देवे। जब पारा और कलई की गिरह बन जावे तब तेज बस को खूब बारीक करके गिरह मजकूर के नीचे ऊपर देकर कपड़ा करीब दो सेर के लपेट लपेट महफूज जगह में रखकर आग लगावे बवक्त सर्द होने के निकाल ले कलई अलहदा पड़ी रहेगी ओर सीमाब कुश्ता हो जावेगा। (सुफहा ५९ किताब कुश्तैजात हजारी)

कुश्ता सीमाब बजरिय:रांग

सीमाब दो तोला, कलई दो तोला, पहले कलई को पिघलाकर पारा शामिल करके बर्गदरख्त झुंड के एक पाव नुगदे के दर्मियान रखकर कपरौटी करके आग दे देवे। करीब तीन सेर के मगर गढ़ा में कलई अलहद हो जावेगी और सीमाब कुश्ता हो जावेगा (सुफहा ५९ किताब कुश्तैजात हजारी)

कुश्तासीमाब बजरियः रांग (उर्दू)

पहले कलई की दो कटोरियां बनावे इसमें महेंदी या भंग को अच्छी तरह बारीक करके निस्फ डाले और इसमें एक तोला पारा डालकर बाकी निस्फ महेंदी या भंग डाले बादहू हर दो कटोरियों को आमेज करके एक उपला कला में रखकर उसके ऊपर दूसरा उपला रखकर सब बंद करके गढ़ा में महफूज जगह आग दे देवे। सीमाब फूल हो जायगा और कलई नीचे बैठ जावेगी। (सुफहा ५९, किताब कुश्तैजात हजारी)

पारद फुल्ल पारदभस्म चांदीयोग

पारद यथेष्ट शुद्ध, काष्ठक, तारे मीरेदातैल, हुसन युसफ का तैल काष्ठक से गुटिका पारद की बनानी। फिर तारे मीरेदे तैल में पकानी फिर हुसन युसफ के तैल में भिगोकर कुठाली में रखकर भस्त्रा धौंकना पारद फुल हो जायगा वंग में योजना करना। (जंबू से प्राप्त पुस्तक)

पारद भस्मवेधक शंखियायोग

रतक कुट्ठ के पाणी में भिगो छोडना फिर उस पाणी में रतक समेत पारा खरल करना गोली बन जायगी।

शंखिया अम्मीरस दा चोवा १ तोले को ५ तोले इसके गोलीपर लेपकरके मृतपात्र में २ सेर कच्चे की आग देनी तोले तामेपर १२ रत्ती श्वेत होवे (जंबू से प्राप्त पुस्तक)

पारद भस्म शंखिया गन्धक आदि के तैल से

शंखिया, श्वेत नौसादर, सोंटी सज्जी तीनों समभाग दडर करके कांस्यपात्र दो में कणक दे आटे नालमुद्रित करके सुका के रखना धोवियों की खुब में लटका देना चार पहर में तेल होगा उस तैल से धारण करना।

ततः मृण्मयी कूपिका कार्य्या तस्या अंतः शोरेवी भावना कार्य्या तस्यां पारदं यथेष्टपरिमाणं निधाय पूर्वं तैलबिंदुं निक्षिप्य संमुद्र स्वल्पो वह्नितापो विधेयः।

(जंबू से प्राप्त पुस्तक)

पारद भस्म शंखिया आदि के तैल से तेजाब से वेधक

१ शंखिया गन्धक, नौसादर गंधक, आंवलासार, सुहागा, शोरा सबको दरड करके तेजाब कर लेना फिर उस तेजाब में आतिशी शीशीमें पाकर २१ दिन में धूप में रखना पारा फिर सतकपडमाटी करके सात सेर गोहे की पुट देनी सिद्ध भया उस पारे को ताम्र वा कली पर पाणा तोले पर १ रत्ती (जंबू से प्राप्त पुस्तक)

कुश्ता सीमाब बजरियः तेजाब गन्धक मयफवाद (उर्दू)

तेजाब गंधक ४ तोले, सीमाब मुसफ्फा १ तोला दोनों को लोहे चीनी की प्याली में दाखिल करके कोयले की आंच पर रख दे और आप जरा फासले पर रहे क्योंकि इसका धुआं मुजिर है जब तमाम तेजाब जलकर सीमाब को खाक कर देवे उस वक्त आग से अलहदा करके वा अहतियात कुश्ता सीमाब को शीशी में रख छोडे। एक निरंज कुश्ता सीमाब को एक माशे खील फिटकिरी में शामिल करके मरीज सुजाक कुरह को दे इन्शा अल्लाह दो तीन खूराक में ही आराम हो जाता है।

(सुफहा १३ अखबार अलकीमिया १६/९/१९०७)

सीमाब को नुकराका चारण करा गोली बना उससे कुश्ता अकसीरी कमरी (उर्दू)

कपडामगीन लेकर चने की ओस में इक्कीस रोज तक तर करके रखे और नमक बना ले चार तोला सीमाब इसमें खरल करे एक माशा नौसादर और तीन माशा वर्क नुकरा मिलाकर बाहम खरल करे सीमाब बस्ता हो जावेगा। जामा मजकूर की थैली बनाकर उसमें पारा अकद शुदा को लपेटे और एक हांडी में ५ सेर नमक संग बारीक पीस कर भरे दर्मियान नमक के थैली मजकूरा रखकर ऊपर से और पावसेर नमक भर दे और गिले हिकमत करके चौबीस पहर बराबर आग देवे सर्द होने पर निकाले सीमाब मियुक्त होगा। एकजुज अजांबर एक तोला अजजेर जोशीदहं अंदाजन्द कमर ख्वाहद बूद (अजब्याज हकीममुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी।)

सीमाब का कुश्ता अकसीरी बजरियः तेजाब कसीस (उर्दू)

शोराकलमी २॥ सेर, फिटकिरी सुर्ख १। सेर, कसीस २ तोला, हरताल तबकिया २ तोले, डौमटकों में डौरूजंतर बनाकर तेजाब खींचो और बार दीगर उसमें डालकर कसीस हड़ताल तबकिया फिर दो और फिर डौरू जंतर में खींचो तेजाब खिंच आवेगा। पारा कदर हाजत तेजाब में खरल करो कुश्ता हो जावेगा शीशी आतिशी कपरौटी करके सीमाब डालकर अर्क जलनीब जर्द डालकर (काह) (कागमेस) से मुंह बन्द करके बालुकाजंतर में आग लगा दो नीचे पारे के आतिश हो चार पहर आग दो खुश्क होने पर फिर तेजाब में डाल खरल करो और अर्कजलनीब भर कर फिर बालुकाजन्तर में पकाओ सात दफै पकाने से कुश्ता अकसीरी हो जावेगा मुजर्रिबअस्त। (अजबियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

सीमाब का कुश्ता अकसीरी (फार्सी)

बियारद नीमादस सीमाब अन्दा दर एक लैमूं सुर्ख कागजी दाखिल कुनद मरओ मुहक्किम बन्दद दर सुकाम कि मर्दुम शाशह कुनद आंजा दफन कुनद तानः रोज बाद कशीदः दरयक लैमू दीगर हमचूं कुनद बादहू सहवारा दरेक लैमू हमचुनी कुनद न रोजनः रोज जुमलै २७ रोज पसबियारद यकबैजा मुर्ग

खाली कर्द: दरआं सीमाब बस्त: निहादह अजअर्क बूटी कापरी पुर कुनद पम हस्त या हफ्त छेप कुनद सीमाब दरू अदाख्त: पस खुम बन्द कुनद दो दो सेर पाचक दस्ती आतिश दिहद इन्शा अल्लाहताला शिगुफ्त: शवद पस बियारद दो टिकिया कलई बिराद भिकदार नखूद अज अकसीर मजकूरह अन्दाजद ता नुकरा खालिस शवद मुजर्रिब अस्त (अज बियाज हकीम मुहम्मद फतहयाब खां सोहनपुरी)

अदबियानामालूम बराइयक तौला हकसम । सफेद गोमची ६ माशे। दूध सफेद आक १ तोला । दूध तिधारा १ तोला। सुहागा तेलिया कदर हाजत जेरुवाला निहन्द व पाचक दस्ती बकदर सहपाउ अगर अशयाइ नामालूम ज्यादह शवद ज्यादह कुनद बादजान फिलजात मकफल मिस्लई कुश्ता सीमाब तिलाकुनद (कुश्ता फल्खूस दरअर्कमकोह दर (अजबियाजहकीममुहम्मदवफतहयाबखांसोहनपुरी)

कुश्ता सीमाब भैंस के सींग में (उर्दू)

पारे का कुश्ता नरजामूश के सींग में कपरौटी मुद: में एक बैरागी को करते देखा है और उसमें पैसे को सफेद कुश्ता करता भी कई बार देखा गया था। (अजबियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

कुश्ता सीमाब (फार्सी)

बियारद नीमआसार चूना व शाख जामूश कि दरां कुंदज जेरुवाला ममका कायम निहादह बाग्लाइश लेप ईकदर कर्द: दर सहमन चोबआतिश दिहद बाद अजमर्द मुदन बिरंज खुराक बवेधक सादक अज। (अजबियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

कुश्ता पारा (उर्दू)

नमक लाहौरी की डली लेकर बशकल कुठाली बनाकर उसमें गोली सीमाब रखें और ऊपर से उसी नमक से दूसरी कुठाली रखकर गिलाफ बनाकर आग अतरनी में आतिश दो पहर देवे पारा कुश्ता हो जावेगा। (अजबियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

शिगुफ्त यानी कुश्ता सीमाब (फार्सी)

अर्क गुलनारफन ऽ। (सीमाब) मुसफ्फा १ तोला खरल कर्द: हुब्ब साजन्द फज्लहू जानवर २ असोर दरजर्फे पुर नमूदह दर्मियान हुबसीमाब निहादह बाज फजलहू मजकूर: पुरसाजन्द बिगीर जर्फरा गिले हिकमत नमूदह दरगोश: सहराई ७ आसार आतिश दिहन्द शिगुफ्तख्वाहद बूद फकीरे कामिल । (अजनियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

कुश्ता पारा बजरिय: नील (उर्दू)

अर्कवर्गनील एक सेर एक तोला पारे पर चोया दो फिर ५ तोले बसमा के नुगदे में रखकर खूब गिलेहिकमत करके अढाई सेर आरने उपलों की आग दो सफेद कुश्ता हो। जजाम को एक रत्ती अकसीर है।

(सुफहा १३ अखबार अलकीमियां २४ फरवरी सन् १९०९)

सीमाब का कुश्ता बजरिय: बोत: हींग व तुख्म चिरचिटा (उर्दू)

हीराहीम दर्ज: अव्वल आधपाव लाकर अंजीर के दूध में गूंदकर ढकनदार बोत: बना लो उसमें एक तोला पारा बंद करके सुखा लो। फिर चिरचिटा के बीजों का आटा आध सेर अंजीरी के दूध में खमीर करके इस बोत के ऊपर चढा दो और उस पर गिलेहिकमत करो। मगर पतला लेप करो और सिर्फ खरियामिट्टी। तब ३ सेर पाचक सहराई में आग दे दो पारा शिगुफ्त: काबिल अमल निकलेगा। (सुफहा १६ अखबार अलकीमियां ८/२/१९०९)

पारे कुश्ता बजरिय: बिच्छू बूटी (उर्दू)

बिछुआबूटी के अर्क में ४६ घड़ी पारे को खरल करे तो नीमकायम ममका हो उस पर अंगूरी शराब का चोया दो बील होगा। (सुफहा १६ अखबार अलकीमिया ८/२/१९०९)

पारदभस्म घीग्वारसे

तोलकद्वयमादाय पारदं शुद्धमुत्तमम् । घृतकौमारिकाद्रावैस्तोलकद्वयसम्मितैः ॥१॥ मर्दयेत् खल्वके यावच्छुष्कतां याति पारदः । पुनर्देयः पुनर्मर्द्यः शुष्कं याते पुनस्तथा ॥२॥ एवं षष्टिपुटैः सम्यग् मर्दयित्वा ततः परम् । काचकूप्यां विनिक्षिप्य तत्सर्वं तु विचक्षणः ॥ मुखं रुद्ध्वा ततो धीमान्वालुकायन्त्रमध्यतः ॥३॥ क्षिप्त्वार्कप्रहरैः पाच्यैः खरमध्याल्पवह्निकैः ॥ भस्म तज्जायते सूतं देहलोहानि वेधयेत् ॥४॥

(काकचंडीश्वरी तन्त्र)

अर्थ—दो तोले शुद्ध पारद को खरल में डाल दो दोही तोले घीग्वार का रस डालकर घोटे जब रस सूख जावे तब उतना ही रस डाल देवे इस प्रकार साठ भावना देवे फिर उसको कांच की शीशी में भर और मुख पर वज्रमुद्रा करे तदनन्तर उस शीशी को वालुकायंत्र में रख १२ बारह प्रहर तक तेज, मध्य और मन्द क्रम से अग्नि लगावे तो देह और लोह को बेधनेवाली अर्थात् देह को सुवर्ण के समान गौरवर्ण करनेवाली भस्म होती है॥१–४॥

पारदभस्मवेधक सूरणयोग

पारदः प्रथमतः सूरणकंदरसेन यामचतुष्टयं मर्दनीयः पश्चात्सूरणकंदगर्ते स्थापनीयः न कश्छिकनीमुपर्यधो दत्त्वा तदनंतरं गजपुटे मध्याशिऽरण्योपलैः पाचयेत्सिद्धयति तंदुलमात्रं तोलकमात्रे शुल्बे ॥

(काकचंडीश्वरी तंत्र)

अर्थ—प्रथम पारद को जमीकन्द के रस से मर्दन करे फिर जमीकन्द में गढा खोद नकछिकनी भर देवे उस पर पारा और पारे पर फिर नकछिकनी भर देवे। तदनन्तर जमीकन्द के टुकड़े से गढे के मुंह को बन्द कर गजपुट में जंगली कंडों की आंच देवे तो पारदभस्म होगी इस भस्म को एक तोले तांबे में एक चावलभर डाले तो सोना होगा।

उपदंशनाशक पारदभस्म

पारद (हिंगुलोत्थ) को अटेला के रस और पत्ती में घोटकर गोली बना ले सुखाकर चिरचिटा (वाल्दार चिपकनेवाला अपामार्ग नहीं) की लुगदी में रखकर कपरौटी कर फूंक दे २० सेर कंडों में इसमें से चावल भर की गोली बड़ी से बनाकर दूध के साथ रात्रि को खावे कठोर उपदंश नाशक है। (अलमोडेवाले पंडजी का बतलाया)

कुश्तासीमाब (उर्दू)

रेवन्दचीनी को खूब बारीक पीसकर अर्कगोभी में खरल करके एक कुठाली बनावे और दर्मियान में हुब्बसीमाब रखकर ऊपर रेवन्दचीनी के मूष बनाकर रखें। ऽ। सेर उपले सहराई में आग दे। (अजबियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

कुश्तासीमाब केले में (उर्दू)

सीमाब को अर्क खट्टुआबूटी में खरल कर गोली बना लो करीब १० गिरह के केला मय जड के लो हर दो तरफ से सपाट करो और दर्मियान में कावाक करके गोली पारे को रखो और अर्क चूकाभर कर नीचे ऊपर गमाह मजकूर: भी दे दो और हर दो तरफ गट्टी सपाट पर जमाकर हफ्त कपरौटी करो और गजपुट की आंच दो कुश्ता हो जावेगा। (अजबियाज हकीम मुहम्मद फतहयाबखां सोहनपुरी)

ी।

/४ – ४ + ०

/४–आज देखने से मालूम हुआ कि कुछ कणीका रवे पारे के गोली के मौजूद है मालूम ऐसा होता है ज्यों ज्यों गरमी बढ़ती जाती है त्यों त्यों की तेजी ज्याद: असर करती है, अतएव आज ६ अंगुल रेत रखकर १। आंच दी गई।

/४, ६ अंगुल रेत १। सेर की आंच आज भी दी रवे पारद के गोली मगर यह रवे पेश्तर के ही मालूम होते है और कल भी यही बात

/४ चार पांच अंगुल रेत १। सेर कंडे।

/४

/४ +०

/४ +०

/४ +०

/४ +०

/४ +०

/४ +० तोल ५ तोले ठीक।

४ आज गोली तोली गई तो ५ तो हुई, खोला गया तो कपड़ा में कपड़ों की तहों में से पारे की बूंद निकली जो तोल में ।) भर हुई टूटा देने पर एक मटैलो शकल की गोली निकली जो इतनी कठिन हाथ से नही टूटी गोली तोलने पर ॥) आने कम ५) तोले हुई से तोड़ने पर गोली अन्दर से कंजाई रंग की निकली और इसमें अंदर रवे भी चमकते थे। जहां तक ख्याल किया जाता है गोली को कभी धिक लग गई, आंच अधिक लगने से (१) कुछ पारा तो उड़ गया, छ जुदा हो गया, (३) कुछ गोली के अन्दर ही पृथक् रूप से रहा,

माल के करीब बाकी निकली जो ...

केले में पारे को भी फूंका था पर फुका ...

चालाक था, बाबू प्यारेलाल के कहने ...

धोखा निकला।

सम्मति–पारे की तहकीकात ...

करो।

पारद गुटिकाओं के निमि...

१/१/०७ कोठी से सरबंदके ...

(एल्मेहन स्पेन में है इसलिये अ... ४ सेर पारा १८) रुपये में ख... श्वेतवर्ण का उज्ज्वल था।

१ शुद्धोपरा...

कुमारी चित्रका ब्योषत्रिफ... भवति पारद: ॥

५/१/०७ सोमवार का ...

त्रिकुटा ३ छटांक, नींबू ...

१॥ सेर काढ़ा लिया ...

६/१/०७ आज ४ ...

बजे से ५ बजे तक ८...

७/१ आज १२ ...

का हो गया और ...

53॥ ॥ सेर पारा ...

पारा दवा में मि...

नमकीन सरस ...

पारा जुदा हो गया। तोलने पर ३॥।‌ऽ) सेर पारा निकल आया १ छटांक औषधी में मिला रह गया, उसको (नमकपड़े औषधी की छूंछ सहित औटाकर छाने) गरम जल से धोकर निकाला गया तो १ छ० पूरा निकल आया।

(१) पारदगुटिका का अनुभव

(अलकीमियां के पत्र १६३ के अनुसार)

१५/१/०७ ककरदुधी को पानी से धो कपड़े से पोंछ खूब बारीक पीस ५ तोले की गोल लुगदी बना उसके दो टुकड़े भर एक टुकड़े के बीच में कांच की गोली से गढ़ा कर उसमें १ तोला पारा भर फिर दोनों टुकड़े खूब मिलाकर ता० १६–१७ को धूप में सुखाया (मगर सूखा नहीं अंदर की तरीने सूखने न दिया)

ता० १८ को ढाईपाव कंडों की आंच दी गई (बंद मकान में गढ़ेमें) तो गोला कपरौटी का मिला उसमें लुगदी जलकर राख हो गई थी और पारा उड़ गया था।

उपरोक्त क्रिया का दूसरे प्रकार से अनुभव

१५/१/०७ ककरदुधी को पानी में धो कपड़े से पोंछ खूब बारीक पीस ५॥ तोले की लुगदी बैजावी बना उसमें पैन्सिल से गढ़ा कर १ तोले पारा भर दुधी की लुगदी ही बंद कर मुल्तानी से एक कपरौटी कर ता० १६–१७ को धूप में सुखाया। (मगर सूखी नहीं अंदर की तरीने सूखने न दिया)

ता० १८ को कुम्हार की मिट्टी का २ रुपये की मुटाई के बराबर लेप चढ़ा दिन भर सुखा शाम को आध सेर की आंच दी गई।

ता० १९ के सबेरे गोले के अंदर जली हुई लुगदी काले कोयलों की शकल की मिली और पारा उड़ गया था।

सम्मति–मिट्टी फट गई थी इसमें नामावगैर: कूट कर और मिलाना चाहिये।

उपरोक्त क्रिया का तीसरे प्रकार से अनुभव

१९/१/०७ कुकरदुधी को धो पोंछ बारीक पीस ५ तोले की लुगदी बना उसके दो हिस्से कर एक हिस्से में गढ़हा कर पारा भर दूसरे को ऊपर रख ज्यों का त्यों लुगदी बना स्याह धतूरे के रस से चिकना मुलतानी की एक कपरौटी कर एक छटांक कुम्हार की मिट्टी (जो रुई डाल कर खूब कूटी पीसी गई थी) का २ रुपये की मुटाई की बराबर लेप करके धूप में सुखा दिया ता० १९ के दो पहर से ता० २० के दिन भर सुखाया, शाम को १ कपरौटी मुलतानी की और कर दी गई।

ता० २१ को सूखती रही।

ता० २२ को सबेरे ɔ॰डेढ़ पाव कंडों की आंच दी गई शाम को देखा तो गोले के अन्दर दुधी जल कर कोयला हो गई थी पारा उड़ गया था, राई की बराबर दो एक रवे रह गये थे आंच और हलकी होनी चाहिये।

उपरोक्त क्रिया का चौथीबार अनुभव

२०/१/०७–कुकरदुधी को धो पोंछ खूब बारीक पीस ५ तोले की गोल लुगदी बना उसके दो भाग कर १ भाग में गढ़ाकर १ तोले पारा रख दूसरे भाग से बंद कर जैसा का तैसा लुगदी को बना स्याह धतूरे के रस से भलीभांति चिकना १ कपरौटी मुलतानी की कर धूप में सूखने को रख दिया।

ता० २० को दिनभर सुखा के ता० २१ के सबेरे १। छटांक मिट्टी कुम्हार की जिसको रुई डालकर खूब पीटा कूटा था लेप करके धूप में सूखने को रख दिया।

ता० २२ को भी सूखती रही।

ता० २३ को गढे में ६ अंगुल गहरे रेत में इस गोले को इस तरह रखा कि १॥ अंगुल नीचे २॥ अंगुल इधर उधर और २ अंगुल ऊपर बालू रही। बाद को ८॥ सबेरे से दो पहर के ११ बजे तक ४ आंच आध आध सेर की और ११ बजे से तीन बजे तक ४ आंच तीन तीन पाव की लगी इस तरह ८ आंच दी गई।

ता० २४ को निकालकर देखा तो पारा ॥ऽ) भर मिला और लुगदी जली हुई ।॥) भर मिली। निकालने पर गोले के नीचे की तरफ कुछ रेत चिपटा हुआ मिला जिससे जान पड़ा कि ऊपर की आंच के लिये जोर से लुगदी का रस भाप हो नीचे की तरफ से निकल गया इस तरफ लेप में कुछ नुक्स भी था।

(२) पारदगुटिका का अनुभव

किताब अलजवाहर उर्दू के पत्र १२० के अनुसार १८/१/१९०७–मुर्गी के ताजी अंडे का १/४ भाग ऊपर उस्तरे से तराश कर उसकी सफेदी जर्दी दूर कर छिलके को पानी से धो साफ कर उसके अन्दर ककरदुधी बारीक पिसी हुई की लुगदी भर उसमें गढ़ाकर उसमें १ तोले पारा भर ऊपर से लुगदी से बंद कर फिर एक दूसरे अंडे का १/३ भाग का छिलका ऊपर से ढक एक कपरौटी शाम को की गई उसके भी सूख जाने पर दूसरी दिन ता० १९ के तीसरे पहर १ लेप मिट्टी कुम्हारी का कि जिसका वजन १ छटांक था और रुई डालकर जिसको खूब कूटा था कर दिया गया।

ता० २० तो दिन भर सूखता रहा शाम को १ कपरौटी मुलतानी की की गई।

ता० २१ को दिन भर सूखा।

ता० २२ को एक गढे में ६ अंगुल ऊंचा रेत भर उसमें इस तरह गोला रखा कि १॥ अंगुल नीचे २॥ अंगुल इधर उधर २ अंगुल ऊपर रेत रहा। फिर ८॥ बजे सबेरे से ४॥ बजे शाम तक २ आंच आध आध सेर की और ६ आंच तीन तीन पाव की लगी।

ता० २३ को सबेरे निकाल कर देखा तो मिट्टी ऊपर की खूब मजबूत मौजूद थी, अन्दर लुगदी दूधी की जलकर कोयल हो गई थी और तोल में ।॥) भर रह गई थी पारा ।।ऽ) भर निकला‌ऽ) भर उड़ गया।

विचार–जान पड़ता है कि इस दुधी से पारा बंधना मुश्किल नहीं दुधी और हो, या क्रिया हो और या पारा और हो। गालिबन क्रिया ठीक नहीं लिखी।

(३) पारदगुटिका का अनु० अपनी बुद्धि के अनुसार

१९/१/०७ एक अंडा मुर्गी का ले उसमें सुई से छिद्रकर करीब १ तोले के उसकी जर्दी निकाल उसमें दो तोले पारा भर अंडे की ही जर्दी में चूना पीस उससे उसका मुँह बन्द कर मुलतानी से १ कपरौटी कर ४ तोले मिट्टी कुम्हार की (जिसकी रुई डालकर खूब कूटा पीसा गया था) कालेप २ रुपये की मुटाई की बराबर कर धूप में सुखा दिया।

ता० १९ को दिन के १० बजे से ता० २० के दिन भर सूखा शाम को १ कपरौटी मुलतानी की और की गई। ता० २१ को दिन भर सूखा। शाम को ɔ॥ऽ कंडों की आंच दी तो ता० २२ के सबेरे अंडा आधा मिला और उसमें ६ माशे पारा मिला बाकी उड़ गया बाकी अंडे का छिलका और जर्दी की

निकला, कुछ संगर के नीचे भी पड़े थे, कटोरे में १७ तोले संगर मिले जिनमें से सत्त्व का दानों का बीना १॥ माशे निकले जिन्हें चुंबक पकड़ता था, और १ तो० दाने ऐसे निकले जिन्हें चुंबक न पकड़ता था, भट्टी के नीचे के संगर २ तोले ८ मा० थे और भट्टी पर लगे संगर ७॥ तोले हुए, १ तोले दोनों को जिन्हें चुंबक न पकड़ता था और कटोरे और भट्टी के कुल ऊपर नीचे के संगरों को पृथक् पृथक् लोहे के खरल में बारीक पीस चुंबक द्वारा सत्त्व पृथक् किया तौ १ तोले दानों में से १ मा० ४ र०, कटोरे के १७ तोले, संगरों में से ४ माशे, भट्टी के नीचे पड़े मिले २ तोले ८ माशे, संगरों में से ५ रत्ती, और भट्टी के ऊपर लगे ७॥ तोले, संगरों में से भी ७ रत्ती सत्त्व निकला। अर्थात् कुल ४ छटांक दवा में से ८॥ माशे सत्त्व निकला।

सम्मति–इस बार आवश्यकता से अधिक अग्नि लग गई अर्थात् कोयला कई बार में बहुत दे दिया गया और ज्यादः देर तक धोंकना जारी रखा है आगे से इतने कोयले और इतने समय की आवश्यकता नहीं।

जाली पिघल जाने का कारण यद्यपि तीव्राग्नि कहा जा सक्ता है किन्तु दूसरा मुख्य कारण यह भी हुआ कि अग्नि की ज्वाला चिमनी की रोक से ऊपर को कम गई और नीचे की तरफ भट्टी खुली रहने से नीचे की तरफ ज्वाला बहुत निकली, जिससे जाली पर ज्वाला का प्रभाव अधिक पड़कर जाली पिघल गई, आगे से भट्टी नीचे के बिलकुल बन्द रखी जावे अर्थात् सत्त्व का ग्रहण करनेवाला पात्र पृथ्वी खोदकर स्थित किया जावे और उस पर जाली रखी जावे, और भट्टी २ फुट ऊंची हो।

सम्मति–आगे से कोयलों की तोल हो, समय घड़ी से देखा जावे, भट्टी पहले गर्म कर ली जावे।

नकशा–अभ्रसत्त्व के पांचवें धानका

नं० धान	तोलदवाजितनी रखी गई	तोलदवा गली हुईजितनी निकली	तोलसत्त्व
नं० ५	नं० २की२॥छ०		
	नं० ३की१॥छ०		सत्त्वकेदाने १॥माशे
	४ छ०		
		कटोरेकेदाने १तो०	स०चू०१मा०४र०
		कटोरेकेसंगर१७तो०	सत्त्वचूर्ण४मा०
		भट्टीकेनीचे के संगर२तो०८मा०	सत्त्वचूर्ण५रत्ती
		भट्टीकेऊपरलगे संगर ७॥तो०	सत्त्वचूर्ण ७र०
		मी०छ०तो०मा० ४ १ ३।	मी०८मा०४र०

अभ्रसत्त्वके पहले धानकी टिकियों को दूसरी आंच

ता० १–८–०८ को पहले धान की निकली ४ छ: टिकियों में से (जो नं० २ की थी) २ छ० टिकियों को खरिया की घरिया में भर मिट्टी में (जिसका नकशा आगे के पत्र पर दिया गया है) रखकर धोंकनियों से कड़ा धोंकना आरम्भ किया, पिसे सुहागे और साभर की बुर की देते गये, १/२ घण्टे बाद धोंकना बन्द कर घरिया को निकाल उलटा किया तो घरिया पेंदे में टूट गई थी जिससे कुछ दवा पिघल कर नीचे भट्टी में गिर जाने की शंका हुई, घरिया के उलटा करने से कुछ कोयलों में मिले हुए रवे मिले जो १ रत्ती थे चुंबक इनको न पकड़ता था, कुछ दवा की राख घरियाही में जमी रह गई, उसको निकाल तोला तो ३ माशे हुई, भट्टी के नीचे तैकर गिरे कांच के से संगारों को जो तोल में ५ तोले ५ माशे थे इस शंका से कि यह दवा घरिया के पेंदे में होकर निकल गई होगी, लोहे के खरल में पीस चुंबक से सत्त्व निकालना चाहा तो कुछ न निकला।

सम्मति–सत्त्वपातन के लिये खरिया की घरिया काम नहीं दे सक्ती कठिन घरिया बनानी चाहिये।

अभ्रसत्त्वपातन–छठा धान भट्टी नं० ३

ता० ३०–७–०७ को उक्त नं० ३ की अवशेष २ सेर छ० टिकियों को खरिया की घरिया में (जिसको पेंदी में एक छिद्र कर लिया गया था) भर उस घरिया को भट्टी में जो पृथ्वी के अन्दर खोदकर बनाई गई थी और जिसका आकार ऊपर दिया है जिसमें चिकनी मिट्टी की बनी छोटी सी चलनी (जिसमें उंगली समान मोटे ४–५ छिद्र कर लिये थे) लगाई गई थी और बंकनाल चलनी के नीचे लगाई गई थी इस प्रकार रखा कि प्रथम चलनी पर कोयले भर लिये कोयलों पर उस दवा युक्त घरिया को रख चारों ओर से कोयले लगा दिये ऊपर मिट्टी का ढक्कन ढक दिया और भट्टी के नीचे सत्त्व गिरने के लिये लोहे का कलछा रख भट्टी के नीचे के द्वार को मिट्टी से बन्दकर दिया गया, ताकि धोंकनियों की हवा बाहर को न निकल कर घरिया के पेंदे से लगे, बाद को दो मजबूत धोंकनियों से धोंकना आरम्भ किया, १/२ घंटे बाद धोंकना बन्द कर नीचे के पात्र को निकाला तो उसमें पिघल कर दवा की दो चार बूंदे टपकी थी जो जमकर चमकदार कांच की शकल की हो गई थी और तोल में ८ माशे थी और दस पांच दाने भी जो तोल में २ रत्ती थे निकले जिनको चुम्बक न पकड़ता था, ऊपर के ढक्कन को उठाया तो आंच की तेजी से अन्दर की तरफ उसकी मिट्टी पिघल कर कांचरूप हो गई थी, घरिया को निकाला तो उसमें कोयलों में मिले हुए १ माशे २ रत्ती दाने निकले इनको भी चुम्बक न पकड़ता था, ३॥ माशे दवा की राख निकली और घरिया की तली में जमी हुई २॥ माशे राख निकली, ५ माशे संगर चलनी पर जमा मिला, सब संगरों को और राख को अलग २ पीस छान चुम्बक से सत्त्व पृथक् किया तो नीचे के कलछी के ८ माशे संगरों में से २ रत्ती, कलछी के २ रत्ती, दोनों में से १ रत्ती, घरिया के ऊपर की ३॥ माशे, राख में से ५ रत्ती, घरिया की तली की २॥ माशे, राख में से भी ५ रत्ती सत्त्व निकला, अर्थात् १ माशे २ रत्ती सत्त्व के दाने और १ माशे ४ रत्ती सत्त्व चूर्ण मिलाकर २ माशे सत्त्व निकला, चलनी पर लगे ५ माशे संगरों में से बिलकुल न निकला।

सम्मति–छेददार घरिया मे कोई लाभ नहीं छेद से नीचे सत्त्व कम टपका और घरिया में आधा बैठा।

अभ्रसत्त्वपातन सातवां धान

ता० २/८/८ को उक्त नं० ३ की अवशेष १ सेर १५॥ छ० टिकियों में से ३ छ० टिकियों को अंगरेजी घरिया में (जो नं० २ की थी और ॥) को आई थी) भर उसी भट्टी में जिसका आकार कुछ बड़ा कर लिया गया था रख १० बजकर १० मिनट पर दो मजबूत धोंकनियों से कड़ा धोंकना

आरम्भ किया ११ बजकर १० मिनट पर यानी १ घंटे बाद धौंकना बंदकर घरिया को लोहे की परात में उलटा तो टिकिया निजरूप से जलकर राख हो गई थी किन्तु पिघली न थी १/३ टिकियों का घरिया के हिलाने झुलाने और परात में गिरने से चूर्ण हो गया था उसमें दाने मिले हुए थे. बड़े बड़े दानों को बीन बाकी राख में पानी डाल कोयलों को नितार सब दानों का निकाला तो कुल ६ माशे २ रत्ती दाने निकले जिनमें ४ माशे ६ रत्ती को चुंबक पकड़ता था और १ माशे ५ रत्ती को न पकड़ता था. बाकी राख में से जो तोल में १ तोले १ माशे ६ रत्ती थी चुंबक द्वारा सत्त्व पृथक् किया तो ७ माशे २ रत्ती चूर्ण निकला अर्थात् कुल १ तोले ५ रत्ती सत्त्व निकला, ६ माशे राख रह गई किन्तु इस चूरे में परात की काई खाई हुई बकुला का माद्दा मिल जाने की शंका है।

उक्त जली हुई टिकियों में से जो तोल में ३ तोले थी दो टिकियों को पीस चुम्बक द्वारा सत्त्व पृथक् करना चाहा तो कुछ न निकला।

(१) सम्मति–अबकी बार आंच १ घंटे दी गई इससे पहले आध घंटे की आंचों के नतीजे से अबकी बार नतीजा अच्छा रहा, सत्त्व भी अधिक निकला और टिकियों में सत्त्व रहा भी नहीं, आगे से १ घंटे से कम आंच न दी जावे।

(२) सम्मति–अँगरेजी बनी घरिया ने अग्नि को भली प्रकार सहन किया किन्तु इसमें एक शंका अवश्य हुई कि कदाचित् कोई धातु घरिया में तो नहीं पड़ा है कि जिसका अंश सत्त्व में मिल जाता हो।

अभ्रसत्त्वपातन, आठवाँ घान

ता० २/८/८ को उक्त नं० ३ का अवशेष १ सेर १२।। छ० टिकियों में से ३ छ० टिकियों को उसी अँगरेजी घरिया में भर उसी प्रकार दो धौंकनियों से ४।। बजे से धौंकना आरम्भ किया १/२ घंटे बाद धौंकना बंदकर घरिया को उलटा तो टिकिया निज रूप में जली हुई निकली, टूटी टिकियों की राख में दो चार मोटे मोटे रवे और कुछ मामूली रवे निकले दोनों रवे तोल में ३ माशे ३ रत्ती हुए, जिनमें १ माशे २ रत्ती को चुम्बक पकड़ता था, और २ मा० १ र० को न पकड़ता था. राख को पानी में धो (पानी से धोने से कोयलों की हलकी राख नितर जाती है और भारी राख तली में रह जाती है) चुम्बक द्वारा सत्त्व पृथक् किया तो १ माशे ३ रत्ती सत्त्व चूर्ण निकला और ५ रत्ती राख रह गई, कुल सत्त्व २ माशे ५ रत्ती निकला. जली हुई टिकियों में से जो तोल में ५ तोले थी दो टिकियों को पीस चुम्बक द्वारा सत्त्व निकालना चाहा तो उसमें से भी अधिक राख को चुंबक पकड़ने लगा।

ता०१७ को उक्त जली हुई ५ तो०टिकियों में से १ तोले टिकियोंको पीस चुम्बक से सत्त्व निकालना चाहा तो चुम्बक पृथक्करण में समर्थ न हुआ, किन्तु जब उस राख को पानी से धो सुखा शेष रही २ तोले, राख में चुम्बक लगाया तो प्रायः सभी राख को चुम्बक खींचने लगा इसलिये इसको ही रख लिया, इससे सिद्ध हुआ कि जब सत्त्व इतर पदार्थों में मिला होता है तो चुम्बक उसे पूरा तौर पर नहीं खींच सक्ता और जब धुलकर अधिकांश अन्य पदार्थ उसमें से निकल जाता है और करीब २ सार भाग ही रह जाता है तो चुंबक उसी भांति खींच सक्ता है।

सम्मति–अबकी बार इस शंका से कि अधिक समय तक अग्नि देने से अधिकांश सत्त्व जल न जाता हो, १ घंटे की जगह केवल १/२ घंटे आंच दी गई किन्तु सिद्ध हुआ कि १/२ घंटे की आंच सत्त्व पृथक् करने को समर्थ नहीं है १ घंटे ही अग्नि देनी चाहिये।

अभ्रसत्त्वपातन, नववाँ घान

ता० २–८–८ को उक्त नं० ३ अवशेष १ सेर ९।। छटांक टिकियों में से ३ छटांक टिकियों को अंगरेजी घरिया में जो खूब सुर्ख हो रही थी भर उसी प्रकार दो धौंकनियों से कड़ा धौंकना आरम्भ किया १५ मिनट बाद ख्याल किया तो घरिया में ऊपर की टिकियों पर रवे दीख पड़े, अतएव धौंकना बंद कर टिकियों को निकाला तो ऊपर ही की टिकियों पर दाने थे नीचे की पर न थे. ऊपरवाली टिकियों के दानों को पृथक् कर तोला तो १।। माशे हुये, जिनको चुंबक पकड़ता था, टूटी टिकियों की राख जो तोल में २ माशे थी उसमें से सत्त्व को पृथक् किया तो आधी अर्थात् १ माशे राख ऐसी निकली जिसको चुम्बक पकड़ता था और १ माशे को न पकड़ता था, कुल सत्त्व २ माशे ४ रत्ती निकला. टिकिया जो तोल में ६ तोले थी उनमें से टिकियों को पीस चुम्बक लगाया तो थोड़ी २ राख को चुंबक पकड़ता था किन्तु पृथक् करने को समर्थ न होता था अतएव–

ता० १७ को उक्त बची हुई ५ तोले टिकियों की पीस रस राख को पानी में धो सुखा चुंबक द्वारा सत्त्व पृथक् करना चाहा तो प्रायः सभी उस अवशेष १ तोले ५ माशे राख को चुंबक पकड़ने लगा, इसलिये सब ही रख लिया गया।

सम्मति–इस बार केवल अनुभव के लिये ही टिकियों पर दाने दीखने पर घरियाको निकाल लिया जिससे अनुमान हुआ कि ऊपर की टिकियों पर अग्नि का प्रभाव पहले पड़ता है और नीचे की टिकियों पर पीछे और यह भी सिद्ध हुआ कि टिकिया साबूत ही रहकर ज्वार बाजरे समान कण रूप में सत्त्व को छोड़ती हैं जो पहले उनके बाहर निकलकर कण रूप में दीख पड़ता है और फिर वह बहकर अधिक शुद्ध होता हुआ नीचे को आता है।

अभ्रसत्त्वपातन, दशवाँ घान

ता० २/९/८ को उक्त नं० ३ की अवशेष १ सेर ६।। टिकियों में से ३ छटांक टिकियों को अंगरेजी घरिया में (जो खूब गर्म हो रही थी) रख उसी प्रकार दो धौंकनियों से बहुत कड़ा धौंकना आरम्भ किया (इस बार बहुत से कोयले डाल इस भट्टी के निकले सब घानों से कड़ा ताप दिया) पौन घंटे बाद घरिया को निकाल दवा को लोहे की परात में ४ जगह अलग २ गिराया (ये बात जानने के लिये कि घरिया के किस हिस्से की दवा में दाने अधिक पड़े) तो जो दवा पहली बार गिरी थी उसमें से दानों को बीना तो ४ रत्ती हुये जिनको चुम्बक पकड़ता था, टिकियों की राख ८ माशे ५ रत्ती थी, दूसरी जगह गिरी टिकियों में से ९ माशे ४ रत्ती दाने निकले जिनमें १ माशे को चुंबक पकड़ता था, टिकियों की राख ८ माशे हुई, तीसरी जगह गिरी टिकियों की राख को धो दानों को निकाला तो २ माशे दाने निकले, जिनमें १ मा० ६ र० को चुंबक पकड़ता था, टिकियों की धुली राख ४ रत्ती हुई साबित जली टिकिया ३।। तोले रह गई उनमें से दो टिकियों को पीस चुम्बक द्वारा सत्त्व पृथक् किया तो ५।। माशे राख में से २ माशे को चुम्बक पकड़ता था, ३।। मा० को न पकड़ता था, चौथी जगह गिरे थोड़े से टिकियों के चूरे और दानों में से दानों को पृथक् किया तो २ मा० ३ रत्ती दाने निकले जिनमें से १ मा० को चुंबक पकड़ता था और १ मा० ३ र० को न पकड़ता था टिकियों का चूरा १ माशे ४ रत्ती निकला, इस तरह इस घान में चुंबक से न पकड़े जानेवाला २ माशे १ रत्ती दानों को छोड़ ४ माशे २ रत्ती सत्त्व के दानें और २ माशे टिकियों का चूर्ण मिलाकर कुल ६ माशे २ रत्ती सत्त्व निकला।

ता० १७ को उक्त ३।। तोले टिकियों की पीस धो सुखा दिया जो १ तोले रही इसमें चुंबक लगाया तो प्रायः सभी राख को चुंबक पकड़ने लगा अतएव उस सबको ही रख लिया।

सम्मति–अबकी बार ये भलीभांति सिद्ध हो गया कि गरमागरम घरिया में टिकिया भरे जाने पर भी पौन घंटे की आंच कम है। एक घंटे की ही होनी चाहिये, और ठंडी घरिया में इससे भी कुछ अधिक।

ता० १४ को उक्त सातवें आठवें दसवें घानों के चुंबक से न पकड़े जानेवाले ५ माशे ५ रत्ती दानों को और १० वें घानके घरिया की तली में निकले जिनमें घरिया का अंश मिल जाने की शंका थी १ माशे ३ र० दानों को और १० वें घान की टिकियों के १ माशे ४ रत्ती चूरे को सबको पृथक् २ पीस चुम्बक द्वारा सत्त्व निकाला तो ५ माशे ५ रत्ती दानों में से १ माशे ५ रत्ती, १ मा० ३ र० दानों में से १ रत्ती, १ माशे ४ रत्ती चूरे में से ५ रत्ती

जुलाल ले ले। इस मुकत्तर का धोया गन्धक पर आग ९ दे वह मक्खन की तरह हो जावेगी। आजमूदह है।

गंधक को (द्रव) पतला करना (उर्दू)

मुर्गे के अंडों के छिलके सवा सेर लेकर नमक के पानी से खूब धोवे कि अन्दर की झिल्ली दूर हो जावे फिर बारीक करके इनमें पाव भर नौसादर मिलाकर पीसकर हांडी में बन्द करके चूने के भट्टे में रख दे। जब आग सर्द हो तब निकाल कर दो बार १५ तोले नौसादर मिलाकर आग दे फिर सर के बाल स्याह पाव भर लेकर सज्जी के पानी से धोकर कतर कर मिलाकर मय ५ तोले नौसादर के मिलाकर आग देवे फिर निकालकर एक तोला आंवलासार गंधक गलाकर अर्क लैमूं में बुझाकर उसमें मिलाकर आग देवे तो यह तमाम गन्धक तेल हो जावेगी और गव्वास होगी।

गन्धक के तेल की तरकीब (उर्दू)

गन्धक आँवलासार के हमवजन शीरा सफेद गुलपलास मिलाकर खरल करे और खुश्क करके कढ़ी में एक तरफ रखकर नरम आग पर रख दे तेल अकसीरी निकल आवेगा।

गन्धक को सफेद करने की तरकीब (उर्दू)

सज्जी एक हिस्सा, दो हिस्सा चूना पानी, एक हिस्सा मिलाकर तीन रोज के बाद मुकत्तर कर ले। इस मुकत्तर गंधक खरल करके नितार जावे। चन्दबार के अमल से गन्धक सफेद हो जावेगी। आजमूदह है।

गन्धक को सफेद करने की तरकीब (उर्दू)

लाहौरी नमक बारीक पीसकर गन्धक के हमवजन खरल में डाल सिरके से दिन भर खरल करे और रात को लटका कर सुबह तमाम पानी ऊपर से गिरा दे फिर सादा पानी डालकर इस कदर खरल करे और नितारे कि नमक की शोरियत बिलकुल जाइल हो जावे फिर और नमक मिलाकर खरल करे और पानी डालकर हल करे और रात को लटका कर सुबह पानी नितार दे। इसी तरह यह अमल करते जावें हत्ता कि चन्दरोज मे गुगर्द सफेद हो जावेगी। अगर यह अमल कुछ जियादह मुद्दत तक करे तो गन्धक का शोला बिलकुल बन्द हो जावेगा। अगर बजाइ सादा पानी के हर बार नमक के सात सिरका डालकर खरल करे तो बेहतर रहे कि जल्द साफ और सफेद हो जाती है। आजमूदः है। दीगर गन्धक और अबरक महलूब हर दो वजन बरस में सिरका डालकर खरल करे और तीन पहर के बाद सिरका ऊपर से नितार डाले फिर खुश्क करके बर्तन में बंद करके जौहर उड़ावे, जो गन्धक उड़कर ऊपर जा लगे और हम वजन तलक धनाव से मिलकर सिर के साथ खरल करे और फिर तीन प्रहर के बाद मुकत्तर करके तसईद करे। इसी तरह चन्दवार करने से सफेद हो जावेगी, दीगर।

गन्धक बारीक पीसकर खरल में डाले और हड्डियों का चूना बराबर वजन मिलाकर नमक के पानी में तीन पहर खरल करे फिर निकाल कर ऊपर से पानी मुकत्तर कर डाले और सफूफ को खुश्क करके तसईद कर ले, गन्धक ऊपर जा लगेगी और चन्दवार के अमल से सफेद हो जावेगी।

गन्धक गलाने की तरकीब (उर्दू)

गंधक को घी से चिकनाकर करछी में गलावे गन्धक उम्दतरह से हल हो जावेगी और जलने न पावेगी नीज जल्द पिघल भी जावेगी आजमूदह है।

दीगर (उर्दू)

बजाइ दूध के अगर अलसी के तेल में बुझावे और ११ बार ऐसा करे तो यही साफ हो जाती है।

गन्धक का बयान (उर्दू)

सफेद गन्धक जो चन्द तदबीर से सफेद और मुसफ्फा (बहती हुई कर ली जावे वह पारे को बस्ता कर देती है सफेद और मसअद गन्धक धातों को खराब नहीं करती। गन्धक का वजूद कानों और चश्मों में बकसरत मौजूद ही है और वहीं से निकाल कर तिजारत में लाई जाती है मगर अलावह अजी मुख्तलिफ हैवानात नबातात और जमादात में भी मौजूद है। मसलन (हैवानात) अंडे की जर्दी, मोर का गोश्त, रोहू मछली और हर किस्म की मछली (जौहरा हैवानात), जुगनू, घोड़े की नाक का मगज, फार्स फोरस तरके बाल, गिरगट चिमगादर, (निवातात) कंघी, नकछिकनी, ढाक का फूल, गुले अब्बासी की जड़ और फूल, करीर, केला अमरबेल, प्याज, बैंगन, तेलियाकंद जलपीपल, ब्रह्मदंडी जहर हल्दिया, धतूरा स्याह, थूहर, सूरजमुखी, रामपत्नी, जावित्री, घीग्वार का गूदा, भिलावा, हल्दी, आक का दूध (जमादात) हरताल, मन्सिल, हसनधूप, सुरमा, पत्थर का कोइला सोनामक्खी, तांबा, सुहागा, चूना।

गन्धक की मुख्तलिफ तदबीर

गन्धक का मुदब्बिर करना किसी बर्तन में गाय का दूध निस्फ तक भरकर इसके मुंह पर बारीक कपड़ा बांध दे और गन्धक आग पर गलाकर इस पर डाल दे ताकि कपड़े के अन्दर से छनकर दूध में जाकर सर्द हो जावे ३ बार ऐसा करने से गन्धक साफ हो जाती है अगर कपड़ा न बांधे और यों ही दूध में डाल दिया करे तो भी एक ही बात है आजमूदा है।

लैमू को अर्सेदराज तक महफूज रखने की तरकीब (उर्दू)

कायदा यह है कि संदूक में रेत की तह जमाकर फासिला फासिला पर लैमू जमाते जाते हैं और फिर इन पर बालिश्त बालिश्त भर रेत डाल देते हैं इसी तरह तीन चार तह जमाकर सन्दूक को रेत से भर देते हैं और वक्तनफवक्तन इस पर पानी छिड़कते रहते हैं जिससे वह लैमू खुश्क नहीं होते जब जरूरत हो निकाल कर इसका रस निकाल कर इस्तैमाल करते हैं दूसरा तरीका यह है कि जिस कदर लैमू अर्सेदराज तक महफूज रखते हों, इनको खालिस शहद में डालकर रखें जब निकालेंगे मिश्लताजा लैमू के होंगे।

अर्कलैमू को दुरुस्त रखने की तरकीब (उर्दू)

अर्कलैमू को साफ बोतल में भर ऊपर से मोम को गुदाख्त करके डालने से उसकी उमदा हिफाजत हो जाती है बल्कि रोगन सरशफ व रोगन गाड या दीगर रोगन डालने से यह अमल बहतर है।

इसकी सिफत

जौहर रसकपूर एक तोला सीमाव एक तोला दोनों को पानी की जड़ ताजा के पानी में जो एक पाव के मुवाफिक हों, इसमें अदविया मौसूफ खरल करे हत्ता कि गोली बैंधस की गोली बांधे फिर तहाम (काली तुलसी) के पत्तों के डेढ पाव नुगदे में गोली मजकूर को देकर कपरौटी करके खुश्क करे फिर पांच सेर पाचक दस्ती में आग लगावे जिससे रक्त ठंडा हो जावे निकाल कर बारीक करके एक सेर दूध में एक रत्ती दवाई (अकसीर) डाले दूध खुश्क होकर चांदी बन जावेगा (वल्लाह अलम बिलसवाब)

जनाब शाह अहमदहुसेनसाहब मुकाम बुढनपुरा मिनजुमलाज जिला तिरहुत मुजफ्फरपुर तहरीर फर्माते हैं–

गयाह जरीन–एवरुजुलसनम इस अतराफ में बकसरत है इल्लादरख्त कोहना दस्तयाब नहीं सहराई व बरतानी दोनों किस्म है और दोनों हम सिफत है। अहल हिनूद इसको तरकारियां बहुत शौक से खाते हैं और काश्त करते हैं मगर दो चार साल के बाद खोदकर फेंक देते हैं। ज्यादा कोहना होना मनहूस समझते हैं और इस सिफत से हर अवाम वाकिफ है। कि बाद

दवाजदह साल इसका खोदनेवाला हलाक हो जाता है। इस वजह से दो चार साल से जियादा नहीं रखते हैं। बाज जगह ऐसा इत्तफाक हुआ कि रऊसाइ के बागोंमें कहीं रह गया है और कोहना हो गया है बाइस तावा कैफियत माली खोदा और फौरन हिलाक हो गया। अर्सा कई साल का हुआ एक बाग में दरख्त कोहना था बागवानने ब वजह ना वाकैफियत उसको उखाड डाला फौरन हिलाक हो गया। इसीके जेर जमीन दो सूरते इन्सान की पैदा हो गई थी।

अगर मुसफ्फा और कायम व मुकल्लिस अजजाइ से इप्तदा अनअमल किया है तो पहले ही मर्तबः मुतवसत आग देनी जरूरी है जैसा कि साइलवाले अकसीर में ईरानी सय्याह ने दी। हकीम सरवरशाह मुकाम काबिललाड डाकखाना खानपुर रियासत भावलपुर तहरीर फर्माते हैं कि–उसूली तरीका यह है।

अकसीर सुर्ख हो, ख्वाह सफेद दोनों के लिये रूह, नफस, हवद और एक मुखमिर स्याल (तेजाब या रूह वगैरः) की जरूरत है पस सब मादनियता अबीतमें से जिस चीज पर रूह होने का तलाक किया जा सकता है वह सिर्फ एक ही चीज यानी सीमाव ही है। लिहाजा अकसीर अहमर अबीज दोनों के लिये इसकी सख्त जरूरत है बाकी रहे जसद और नफस सो वह सुर्ख के लिये अलहदा हैं और सफेद के लिये अलहदा मगर जसद हो। ख्वाह नफस दोनों तरीकों में इनकी तादात हिन्दमिया बाहदतक मशहूर नहीं है, यानी वह एक से जायद है अगर्चः इनमें से बाज अफजल व अकमल और बाज अदना व नाकिस ही क्यों न हो इल्ला जरूरतन अगर एक का बदल दूसरे से लिया जावे तो भी काम चल सकता है। मस्लन सुर्ख के लिये अजसादे में से जौहब और अनफास में से किबरियत अहमर अजजा कामला व तामः है। और सफेद के लिये जसद फजः और नुकस सम्मुल्फार अकमल है इल्ला अगर अमदन ख्वाह जरूरत न तरीका सुर्ख में जहब के एवज दूसरे अजसाद शमसी नाकिस मिस्ल निहास या मुरक्किबात निहासी (जंगार, धनियां, संगरासख, तूतिया वगैरः) या सीसा या आहन खाम और किबरियत के एवज दूसरे अनफास शमसी मिसकल सुम जर्द व सुर्ख व स्याह, व मन्सिल व जंजफर, व नमक सुर्ख वगैरः मुबदिल कर दिये जावें और ऐसा ही सफेद में फजः के एवज कलई, फौलाद वगैरः अजसाद फजी और सम्मुलफार के एवज जरनेख नमक सफेदः वगैरः अनफासफजी में से कोई तबदील कर लिया जावे तो भी काम चल जावेगा गोबवजह अजजाइ नाकिसः कमकुव्वत के मर्तबः तरहका कमी पर आ जावे। इल्लामायूसी नहीं होगी। बाकी रहे मखमरात जिनका खास्सा इमजाज अरकान सुल्सः बजरियः तहनशीनी व सवात व मुशम्मा और गवासी और नफूजः वगैरः है सो इनमें बाज कवी है मिस्ल दहन लायहर्क व दहन उसअशर वगैरः और बाज अजीफ है मिस्ल मियाह वारदह यानी सिरका, आवअनार तुर्श, आबलैमू वगैरः लिहाजा इनकी तकवियत के लिये अमलाहया शहबत में से कोई जुज व मिस्ल नौसादर वगैरः मिलाने की जरूरत होती है और नीज इनमें से बाज अकसीर शमसी के लिये मखसूस है मिस्ल दहन मुकत्तिर अहमर व अफसर बैजा और बाज अकासीर कमरी के लिये खास है मिस्लन मुकत्तर अबीज मुशम्मा और बाज दोनों तरीकों सुर्ख व सपेद में यकसा मुफीद है, मिस्ल दहन लायजर्क और रोगन बैजा अहराकी तरकीब अखज अज जाई अकसीर–

अब हम अकसीर सुर्ख बनाना चाहें ख्वाह सफेद–बेहतर यह है कि इरकान् सुल्सः और मखमतरा में से जो अक्वी व अकमल हो व वेखलल हो, इसी को अख्तियार करे ताकि कोई रुकावट पेश न आवे वरनः जिसको लेंगे उसी से कामयाबी मुमकिन है कि अगरपस हम अकसीर सफेद के लिये मस्लनरूह (सीमाव) और जसद अकमल यानी चांदी और नफस अकमल यानी सम्मुल फार ख्वाह हड़ताल ख्वाह नमक लाहौरी लें या अगर अकसीर सुर्ख बनाना चाहते हैं तो रूह (सीमाव) और जसद अकमल यानी (सोना) और नफस अकमल (किबरियत) लें और दोनों के लिये मुखमरात में से ऐसा स्याल कवीव अकमललैन जो दोनों में मुस्तैमिल और यकसा हो,

मस्लन रोगन नौसादर कायमुल्नार, ख्वाह रोगन जर्दी बैजा अहरा की और तस्किया का अमल जारी करके मिनजुमले कवाइद अरबातकमील अकासीरक एक तरीके पर कारबंद हूं तो इन्शाअल्लाहताला कामयाबी होगी, तशरीह कवाइद अरबातकमील अकासीर कायदा अव्वल अरकान अकासी को माह महरका तसकिया तमाम दिन या कम से कम एक घंटे तक दीगर रात को कम से कम एक घंटे नरम भूभल का तश्विया दे और यह ही अमल मुकर्रर करता रहे हत्ताकि अकसीर मुमिया बेदूद हो जाए तो यह खुद खवास व सवाग होगा। कायदा दोम अरकान को मुखमिरका का तस्किया देकर सहक बलेग करे फिर इसका जौहर उड़ावे फिर आला वासफल को मिलाकर तख्म मजकूर का तस्किया दे और सहक बाद तसहीर करे, इसी अमल को यहां तक मुकर्रर बार बार करे कि सब अकसीर तहनशीन और साबित बेदूद हो जाय। यह भी खुदगवास व सवाग होगा। कायदा सोम–बमूजिब कायदा अव्वल या दोयम मूमिया ख्वाह तहनशीन करके हल व अकद करे तो इस वक्त मर्तबः तरह का साबिक से बढ़ जायेगा फिर हल व अकद करे अलहाजुलकयास हत्ता कि मर्तबः रफीअपर पहुंचे। कायदा चहाराम अरकान को तस्किया मुखमिर व सहक बलेग के बाद शीशी आतिश में बन्द और गिलेहिकमत करके बालू जन्तर की आग दे तो काबिल तरह हो जायेगा फिर दुबारा सिबारा तस्किया व सहक के बाद बालू जन्तर का तकरार तो मर्तबा तरह का बढ़ता जाई और चन्द मर्तबः के बाद मुगलव आला पर फातिर होगा इन्शा अल्लाहताला यही चार कायदे आला तरी हैं अकसीर हक की तकमील है कि अब रहा ताकत अकसीर और मर्तबः तरह का इल्म पहले आग में पस अगर अजजाइ नासाफ बाजारी और अजसाद गैर मुकल्लस हैं तो पहले आग में हम्मलान ही तक मर्तबा तरह का महदूद होगा या शायद कि कुछ भी असर पैदा न कर सके इल्ला चन्द मर्तबः तकरार अमल के बाद और अगर अजजाइ मुसफ्फा गैर कायम और अजसाद गैर मुकल्लिस होंगे तो अदना दरजे की अकसीर या बहां आला हासिल हो सकता है, अगर रूह व नफस मुसफ्फा मसअद और हवद मुकल्लिस ख्वाह गैर मुकल्लिस से तैयार करेंगे तो अकसीर का मर्तबा किसी कदर जियादा होगा, अम्मा अगर रूह व नफ्स को कायम व गवास और जसद को मुकल्लस आजब करके इप्तदाइ अमल करेंगे तो अकसीर की ताकत कवी और मर्तबः तरह का बहुत बढ़ा हुआ होगा, यह तो पहली आग का हाल है, खुसूसन कायदा सोम व चहारमकी रूसे फिर अकसीर मामूला पर जितनी मर्तबः अआदह अमल का करते जायेंगे, उसी कदर दर्जा बर्दजा ताकत बढ़ती जावेगी, अब मीजानुलनार मालूम करना यही अम्र जरूरी है, सब एमाल में ज्यादह अहतियात आग के वजन की है। पस मिनजुमतन इसका बयान यह है कि अव्वल अव्वल नरम आग देनी चाहिये और रफ्तः रफ्तः तदरीजन और मर्तबः बाद आखरी ज्यादह करता जावे लेकिन किसी कदर मुफस्सिलन इसका बयान यह है कि अगर इप्तदाई अमल ना साफ और गैर कायम और हारव व जाइब अजजाइ से है तो आग इप्तदाई बहुत नरम होनी चाहिये।

जनाब गुलामहुसेन साहब कंतूरी से दरियाफ्त तलब (उर्दू)

दूसरा मसला व मंजिला होल के है जिस धातु की राइहः से पारा बस्ता और कायमुल्नार किया जाए वही धातु बन जाता है। इस मसले का तजरुबा हमने और हमारे तलान्दह ने कर लिया है तांबा और पीतल (शदादीबूना) और लोहा और चांदी मगर फूटक यह सब पारे से बनचुके अब फूटक दूर करने का तजरुबा हो रहा है उसके बाद सोना भी उसी काइदे से बनाया जायेगा (राकिम गुलामहुसेन, कन्तूरी सुफहा ११ किताब अखबार अलकीमियां १६/४/१९०५)

शनाख्त काजीविस्तार (जो कश्मीर में बकसरत देखी गई) (उर्दू)

काजीविस्तार मारूफ दूधकबूटी छतरीवाली फार्मी शीकर इसको जुमला

पारद तन्त्र विज्ञान

वैद्य सुभाष चन्द्र

वर्तमान में, मानव कल्याण के लिए पारद तन्त्र विज्ञान का स्वरूप काल से मुक्त करने के लिए मृत्युनाशक रूपों में देह सिद्धि के लिए प्राचीन ऋषि-मुनियों के द्वारा आगे आया हुआ वैदिक ज्ञान है। जिसकी जटिल प्रक्रियाओं का उल्लेख पुस्तक में करते हुए उनकी सिद्धि का उपाय किये जाने वाले साधनों के अंतर्गत दिया है। जिनका विधिवत साधन करने वाला साधक पारद सिद्ध करके उसके उपयोग से जरा-व्याधि मुक्त देह सिद्धि से मोदन प्राप्ति का ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकता है, जिसे प्राचीन काल में मुमुक्षुओं ने सिद्ध किया था। पुस्तक की विषय वस्तु प्राच्य-ज्ञान के अवधारण से अवधारित किये गए शोध कार्यों द्वारा आयुर्वेद के विकास में रस ज्ञान के सार्थक सूत्रों को आगे लाने का दावा रखती है।

कुल दस पटलों के चौबीस प्रकरणों में सुसज्जित हुई यह पुस्तक आयुर्वेद के क्षेत्र में आरोग्यता के लिए उपयोगी रसों के निर्माण की विधि का पूर्ण ज्ञान प्रस्तुत करती है। जिसमें कल्याणकारी पारद का प्राच्य-ज्ञान समाहित हुआ आज अमूल्य धरोहर के रूप में सहज देखा जा सकता है।

लेखक आयुर्वेद के क्षेत्र में आयुष्कर गुणों के लिए पारद के शोध कार्यों में स्वतन्त्र रूप से संलग्न होकर मानव कल्याणकारी विशिष्ट रसौषधियों की प्राप्ति का साधन करने में अग्रसर है। जिसमें प्राचीन ऋषि-मुनियों का कालान्तर से लुप्त हुआ रसधातु व्युत्पादन का जरा-व्याधिनाशक ज्ञान सम्मिलित है।

शोध में विकसित तामेश्वरीमहीमयपात्र की अपूर्व रचना आरोग्यवर्धक गुण के लिए वर्तमान में आयुर्वेद की सर्वोत्तम महत्त्वपूर्ण उपलब्धि का दावा रखती है तथा ताम्ररस, ताम्रजीर्णरस भस्म, गंधकजारण से विशिष्ट रस शोधन कर उसकी गंधक बद्ध रस पिष्टी और भस्म की सिद्धि मानव जीवन को रोगमुक्त कर दीर्घायु की प्राप्ति के लिए दुर्लभ रस ज्ञान के गहन शोध में आती है।

पारद का विज्ञान के क्षेत्र में किया गया शोध कार्य वायुमण्डलीय दाब को हटाकर निर्वातीकरण बनाने में सफल सिद्ध हुआ है जिसका उपयोग भविष्य में ऊर्जा प्राप्त करने के क्षेत्र में किया जा सकता है।

उपर्युक्त किये गए शोध कार्यों की जानकारी का स्वरूप पुस्तक के दसवें पटल में दिया गया है।

लेखक : वैद्य सुभाष चन्द्र

आमुख

भगवान शिव द्वारा उपदिष्ट पारद ज्ञान का महत्त्व रोग, बुढ़ापा और मृत्यु का नाश करने के लिए वैदिककाल से आगे आया हुआ मानव जीवन के लिए आज भी अतिशय कल्याणकारी रूपों में है, जिसमें अमरत्व के लिए देहसिद्धि का साधन व आकाश में गमन कराने वाली शक्ति छुपी हुई है। जिसका साधन मोक्ष के मार्ग में बाधक बनने वाले अस्थिर शरीर को स्थिर बनाने के लिए मुमुक्षुओं ने किया था। जिनमें कपिल, वशिष्ट, अत्रि आदि मोक्ष को प्राप्त हुए ऋषि-मुनियों के नाम आयुर्वेद से जुड़े हुए हैं। जिन्होंने आयुर्वेद को आगे बढ़ाया था, जिसमें पारद ज्ञान का स्वरूप काल-पाश से जकड़े हुए मनुष्यों को रोग बुढ़ापा और मृत्यु से दूर करने वाला अमरत्व की प्राप्ति के लिये था। ऋषि-मुनियों द्वारा विकसित किया गया पारदज्ञान का स्वरूप उसकी प्राप्ति के साधनों में गुरू-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत आगे बढ़ता हुआ ज्ञान गोपन की प्रवृत्ति के कारण अमरत्व की प्राप्ति से दूर होता हुआ सहज सिद्ध न होने वाली कठिन प्रक्रियाओं के स्वरूप में आगे आता गया जो मध्यकाल के मुमुक्षुओं के लिये गहन शोध का विषय बन चुका था। अनेक मध्यकालीन मुमुक्ष़ुओं ने पारद का गहन शोध करते हुए अपने बनाए रस ग्रन्थों में उन कठिन प्रक्रियाओं का भलीभाँति उल्लेख किया है, जिनकी प्राप्ति का साधन करके ये मुमुक्ष रससिद्ध मनीषी कहे जाते थे, जिनमें आयुर्वेद से जुड़े चरक, सुश्रुत, वांगभट्ट, नागार्जुन, माण्डव्य आदि नामों का उल्लेख मुख्यत: मिलता है।

वर्तमान में कालान्तर से लुप्त हुआ पारद ज्ञान का स्वरूप सहज सिद्ध न होने वाली कठिन प्रक्रियाओं के अन्तर्गत अनेक रस ग्रन्थों में बिखरा हुआ दिखाई पड़ता है, जिसको मैंने अपने पारद शोध में व्यवस्थित करते हुए मानव कल्याणकारी पारद तन्त्र विज्ञान की रचना आयुर्वेद के क्षेत्र में की है। जिसका स्वरूप मानवीय स्वास्थ्य की रक्षा के लिए उन दुर्लभ रस-भस्मों के आविष्कार की भूमिका में कठिन प्रक्रियाओं के

शोध कार्य से जुड़ा हुआ है, जिनका साधन करना सम्भव न माना जाने के कारण उन्हें आयुर्वेद की रस चिकित्सा से दूर कर दिया गया था।

जिनके स्थान पर सहज रस क्रियाओं के कूपीपक्व रसायन रस भेषजों द्वारा बनाए जाने के कारण वह देहोपयोगी आयुष्कर गुणों के लिए सिद्ध नहीं होते हैं, जिसके कारण पारद में रहने वाली अशुद्धता से लाभ की अपेक्षा हानि की आशंका का होना स्वाभाविक है जिसका निराकरण करने के लिए पुस्तक में पारद के षोड्शसंस्कारों का विधि निरूपण भलीभाँति किया गया है, जो कि पारद का शोधन, मूर्च्छन, बन्धन, और भस्मीकरण के उपयोगी रूपों में करने के लिए निरापद रसौसधों के निर्माण की प्रक्रिया में आया हुआ रससिद्ध मुमुक्षुओं के रस ग्रन्थों पर आधारित है। जिसे मैंने अपने गहन शोध में अथक परिश्रम करते हुए पारद के विशिष्ट गुणाधानों में दोषमुक्त पारद का स्वरूप घन तथा चपलता को त्यागा हुआ, अग्निसह तथा धातुओं को खाने वाला और उन्हें बनाने वाला गुण देहोपयोगी रसधातु व्युत्पादन रससिद्धि की क्रियाओं के प्रायोगिक रूपों में देखा है, जिसका उपयोग आयु एवं आरोग्यता के लिए निस्सन्देह आयुष्कर गुणयुक्त रहता है। जिसकी प्राप्ति का साधन पुस्तक में अनेक रस ग्रन्थों का उल्लेख करते हुए दिया गया है।

वैदिक चिकित्सा में पारद का महत्त्व

वैदिक चिकित्सा में मुख्यतः तीन प्रकार के औषधियों का वर्णन मिलता है, जो उत्तम, मध्यम और निकृष्ट चिकित्सा के अन्तर्गत आयी हुई, दैव, मानुष और आसुर भेद से देखी जाती है।

यथा

औषधं त्रिविधं प्रोक्तं देवं मानवमासुरम् ॥

(रस मानस)

इसी प्रकार वैद्य (चिकित्सक) भी तीन प्रकार के कहे गए हैं।

यथा

रसवैद्यः स्मृतो वैद्यो मानुषो मूलकादिभिः ।
अधमः क्षारदाहभ्यामित्थं वैद्यस्त्रिधामतः ॥ 1॥

(रसार्णव)

अर्थः वैद्य वही होता है जो रस चिकित्सा करता है, वह दैव वैद्य कहा जाता है। और जड़ी बूटियों से चिकित्सा करने वाला वैद्य, मानुष वैद्य कहलाता है, और क्षार तथा दाह से चिकित्सा करने वाला अधम वैद्य होता है।

इन तीनों प्रकार के वैद्यों में रस (पारद) से चिकित्सा करने वाला वैद्य सर्वश्रेष्ठ दैव वैद्य इसलिये कहा गया है कि वह असाध्य रोगों की चिकित्सा करने में सफल होता है, जबकि जड़ी-बूटियों से असाध्य रोगों का जीतना सहज न होने से उसे मानुष वैद्य कहा गया है। तीसरे प्रकार का वैद्य जो क्षारादि और दाह (दग्धकर) पीड़ा देने वाला होता है उसे अधम (आसुर वैद्य) माना गया है।

रस चिकित्सक की प्रधानता को लेकर मनीषियों ने लिखा भी है कि:

अल्पमात्रोपयो गित्वादरूचरेप्रसंगतः ।
क्षिप्रामारोग्यकारित्वा दौषधेभ्यो रसौधिकः ॥2॥

अर्थः वैदिक क्षेत्र में औषधियों के अन्तर्गत जड़ी-बूटियों का सेवन अधिक मात्रा में किया जाता है, जो स्वाद को बिगाड़ती है और अधि क दिनों में अपना फल देती है, जबकि रसौषध (पारद से बना औषध) अल्प मात्रा में दिया जाता है और न ही अरूचि करता है तथा शीघ्र फल देने वाला होता है। इसलिये समस्त औषधियों में रस का महत्त्व सर्वोपरि माना जाता है।

रस ही जीवन है

रस ही जीवन का आधार है, जिसे देह में बनाए रखने के लिए पारद के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा उपयोगी औषधि नहीं है जिससे देह चिरकाल तक जरा-व्याधि मुक्त हो सके, क्योंकि प्राचीन मनीषियों ने पारद का शोधन करके देह स्थिर करने वाले पारद के गुणों को भलीभाँति आयुर्वेद की दृष्टि से देखा था, जिसमें पारद के अन्तर्गत वह सभी गुण विद्यमान थे जो अमरत्व के लिये देहसाधन में होने चाहिए। उन गुणों में रसधातु व्युत्पादन का कार्य जो बीज द्वारा सृष्टि में जीवों का सृजन करता है, वह पारद में छुपा हुआ होने से पारद को शिवबीज, ब्रह्म, जन्म-मरण के बन्धनों से मुक्त करने वाला सर्वेश्वरादि अनेक रूपों में मनीषियों ने जाना था।

तत्व ज्ञानी यह भलीभाँति जान सकते हैं कि इस सम्पूर्ण ब्रह्मांड में रस के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं है, रस ही आकाशादि भेदों से प्रकाशित हुआ सूर्यादि, ग्रह, नक्षत्रों का कारण है, जिसमें सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और नाश का क्रम समाया रहता है। रस ही सर्वदा अपने एक रूप से अनेक रूपों में भासता हुआ इस सृष्टि को अपने स्वाभाविक (प्राकृतिक) गुण के कारण धारण करता है, जिसका पंचभूतमय गुण देह में स्थित होने पर चिरस्थायी जीवन देता है, जिसके लिये पारद की सिद्धि अमृत के तुल्य मानी गयी है, जो देह में स्थिर होने पर काल से रक्षा कराने वाला मृत्युनाशक माना गया है।

आज पारद का ज्ञान प्राचीन रस ग्रन्थों में गोपनीय होता हुआ, धीरे-धीरे लुप्त होने के कगार पर आ गया है, जिसका प्रतिसंधान मनीषियों द्वारा प्रतिपादित पारद के उपयोगी स्वरूपों के लक्षणों में प्राप्त होने वाली अवस्थाओं के भेद में किया जाता है, जिसे तत्ववेत्ता शिवकृपा से जानते हैं। जिन्होंने पारद के गुणों की महिमा को मूर्च्छन, बन्धन और भस्मीकरण की अवस्थाओं में प्रकट किया हुआ है।

यथा

मूर्च्छितो हरते व्याधीन्बद्धः खेचरसिद्धिदः ।
सर्वसिद्धि करो लोके निरूत्थो देहसिद्धिदः ॥ 3॥

(शब्दकल्पद्रुम)

अर्थः पारद के उपयोगी स्वरूपों में मूर्च्छित हुआ पारद रोगों का नाश करता है तथा बद्ध किया हुआ (गुटिकाकार) आकाश गमन कराता है। और मृत (भस्मीभूत) होने पर पारद सब सिद्धि को देता है। यदि किसी भी प्रकार अपने स्वरूप में न आवे अर्थात् पूर्ण निरूत्थ भस्म होने पर पारद देहसिद्धि देता है जो अमरत्व के लिये है।

उपर्युक्त पारद के इन गुणों की उपलब्धि के लिये आज भी अनेक विद्वान पारद शोध के लिये प्रयासरत हैं, परन्तु अपर्याप्त ज्ञान के कारण अपना बहुत सा धन और समय बर्बाद करने के अतिरिक्त उन्हें कुछ भी हाथ नहीं लगता है। रस क्रियाओं से जुड़े ऐसे अनेक व्यक्ति हैं, जिन्होंने पारद से स्वर्ण बनाने का स्वप्न देखा है, तथा कितने ही व्यक्ति पारद से स्वर्ण बनाने का प्रयास करते हुए मर चुके हैं। पारद का यह गुण लोहबेध की प्रक्रियाओं में रस ग्रन्थों के अन्तर्गत आया हुआ है,

क्योंकि पारद से देहबेध की कसौटी लोहबेध के अन्तर्गत आती थी। जिसका कारण था अनमोल जीवन की रक्षा में पारद का प्रयोग पहले लोहबेध के लिये करे, यदि वह ताम्रादि धातुओं को स्वर्ण में बदल सकता है तो निश्चय ही देह को अमर बना देगा। अर्थात् लोहबेध ही देहबेध की कसौटी थी। जिसे आगे चलकर मध्यकाल में भौतिक सुखों के लिये, पारद के देहबेध की प्रक्रियाओं को जो मोक्ष के लिये आध्यात्मिक लाभ के लिये थीं, उन्हें लोहबेध के रूप में देखा जाने लगा था, जिसके कारण पारद के देहोपयोगी स्वरूपों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया, जिसका नागार्जुन आदि रसाचार्यों द्वारा स्वर्ण निर्माण के लिये उपयोग किया गया माना जाता है। जबकि वाग्भट्टाचार्य आदि मनीषियों द्वारा पारद का उपयोग उसके शोधन प्रक्रियाओं में मानव स्वास्थ्य की रक्षा के लिये निर्मित किये जाने वाले रसौसधों के निर्माण में किया गया था।

प्राच्य ज्ञान के अन्तर्गत पारद के गुणों का विवेचन रोग, दरिद्रता एवं मृत्यु नाशक रूपों में आज भी मानव कल्याण का सर्वोत्तम विकल्प है, जिसमें बद्ध पारद का खेचरत्व गुण विज्ञान के शिखर पर गुरूत्व प्रतिरोधक शक्ति का कार्य कर सकता है, जिसे मैंने अपने निजी अनुभवों में निरन्तर पच्चीस वर्ष तक अथक परिश्रम के साथ पारद पर किये गए गहन शोध कार्यों में भलीभाँति समझा है। जो मानव कल्याणकारी प्राच्य- विकल्पों के गवेषण से आयुर्वेद को पुनः रसज्ञान की सार्थक उपलब्धियों से जोड़ने का मार्ग प्रशस्त करता है। जिसमें शोध की विषय वस्तु रससिद्धि के षोड्श संस्कारों में दीर्घायु के लिये आरोग्य वर्धक रसों का आविष्कार उन तथ्यों के साथ सम्भव हुआ है। जिनकी सिद्धि का उपाय वर्तमान में सम्भव नहीं होने से पीछे छूटा हुआ था। जिसका अभिव्यक्त स्वरूप पुस्तक की विषय वस्तु के अन्तर्गत सहज देखा जा सकता है, जो कि पारद की रोगनाशक क्रामक शक्ति को बढ़ाने के लिये बीजसाधन, ग्रासमान, चारण, गर्भद्रुति और जारण की प्रक्रियाओं का प्रतिबोधन प्रमाणित रूपों में, प्राच्य रसज्ञान का प्रति बोधक है।

वर्तमान में पारद के सार्थक ज्ञान को प्रकट करने के लिय प्राचीन रससिद्ध मनीषियों के लिखे ग्रन्थों के अभिज्ञान से जुड़ा पुस्तक का रचनात्मक स्वरूप रस चिन्तामणि, रसरत्न समूच्च्य, रस रत्नाकर, रस-

सारपद्धति, रसहृदय, रस पद्धति, रस पारिजात, रसराज शंकर, रस प्रकाश- सुधाकर, रसराज सुंदर, काकचण्डीश्वर, योगसार, रसेन्द्र चूड़ामणि, योगतरंगिणी, रस सिन्धु, नागार्जुन, टोडरानन्द, सारोद्धार पद्धति, निघंटु रत्नाकर, निघंटुराज, रस संकेत कलिका, रसायन सार संग्रह, रसराज हंस, रसमंजरी, धरणीधर संहिता, योग चिन्तामणि, शिवागम तन्त्र औषधि कल्पलता, वेद्यादर्शादि आदि – प्राचीन रस ग्रन्थों से उद्‌भासित किया हुआ मानव कल्याणकारी पारद ज्ञान का सिद्धक है, जिसका सफल शोध मैंने जरा-व्याधि नाशक दुर्लभ रसों के अन्वेषण में किया है। जो नूतन आविष्कार की भूमिका में वर्तमान के सर्वोत्तम उपयोगी रसों का दावा रखते हैं।

मेरे शोध कार्यों से जुड़ी हुई यह पुस्तक उपर्युक्त रस ग्रन्थों के अन्तर्गत बिखरे हुए पारद ज्ञान को एकत्रित करके पारद शोधकर्त्ताओं का मार्ग दर्शन करने में यन्त्र, मूषादि भेदों से पारद के अष्टादश संस्कारों की सिद्धि में आती है तथा प्राचीन ऋषि-मुनियों के रसज्ञान को भविष्य में बनाए रखने की अमूल्य धरोहर है।

विषय सूची

चौथा पटल

पाँचवाँ पटल

छठवाँ पटल

सातवाँ पटल

आठवाँ पटल

नौवाँ पटल

दसवाँ पटल

प्रकरण-1

तन्त्र निरूपण

तन्त्र शब्द का व्यापक अर्थ है, जिसके जानने से इस जगत में कुछ भी जानना शेष नहीं रह जाता है। जिसका प्रादुर्भाव भगवान शंकर द्वारा मानव कल्याणकारी रूपों में यहाँ पर पारद ज्ञान से लिया गया है।

तन्त्र का शाब्दिक अर्थ अनेक रूपों में आता है, जिनमें वेद की एक शाखा, आनन्द, घर, सम्पत्ति, राजकार्य, व्यवसाय, शासन, दल, कुटुम्ब के पालन पोषण का कार्य, जुलाहे का ताना बाना, द्रढ़, प्रमाण, विचार, औषधि, झाड़-फूंक का मंत्र, उपाय, कारण, कर्त्तव्य, धर्म, राज्य की व्यवस्था, आधीनता, उद्देश्य, दूत, तंतु, तांत, पद, समूह, सेना, अधिकार, ग्रन्थ रचना, औषधि, पारद, और शिव के मुख से कहा हुआ एक शास्त्र जो मानव कल्याणकारी रूपों में वैदिक ज्ञान के अन्तर्गत आया हुआ है। इस सृष्टि जगत में जो भी क्रियाकल्प हैं, वह सभी तन्त्र के व्यापक अर्थ का बोध करने में आगे आता है, जिनमें मुख्यतः शिवजी का तेज (पारद) को मानव कल्याणकारी सर्वोत्तम तन्त्र प्रक्रियाओं की श्रेणी में रखा गया है, जिसके द्वारा मनुष्य पृथ्वी पर देवों की समता प्राप्त कर सकता है। इस जगत कल्याण कारक तन्त्र का ज्ञान मोक्षदायक होने से उसे मुमुक्षुओं ने प्राचीन काल में अपनाया था, जिसमें मुख्यतः दो पद्धति भगवान शिव द्वारा सृष्टि के आदि में ऋषि मुनियों को उपदिष्ट थीं, जिनमें पहली रसमूलक पद्धति थी और दूसरी वायुमूलक पद्धति। ये दोनों ही पद्धतियाँ मोक्ष प्राप्ति के लिए पिण्डस्थर्य से जुड़ी थीं। इन दोनों पद्धतियों में रस और वायु के एक समान गुण व्यक्त थे। जिनमें रसमूलक पद्धति का मुख्य आधार रस (पारद) था, और वायुमूलक पद्धति का मुख्य आधार वायु (प्राण) था। जिनकी क्रियाएं भिन्न रूपों से देहसिद्धि के लिए जानी जाती हैं, क्योंकि वायुमूलक क्रियाओं का सम्बन्ध प्राण से होने के कारण शरीरस्थ है, जबकि रस क्रियाएं गंध कादिक औषधि विशेष के संयोग से देहसिद्धि के लिए पारद के अन्तर्गत आती हैं।

सृष्टि के आदिकाल से ही मानव मृत्युभय से पीड़ित होकर उससे मुक्त होने का साधन खोजता रहा है। जिसमें पिण्डस्थर्य से जुड़ी ये दोनों पद्धतियाँ अजरामर (सदैव रहने वाला) करने वाली होने से मुमुक्षुओं को अपनी तरफ आकर्षित करती रही हैं, जिनका लाभ प्राचीन काल में मनीषियों ने प्राप्त किया था, ये मनीषि सिद्ध ऋषि-मुनी कहे जाते थे। जिनके जीवन का अन्तिम उद्देश्य मोक्ष प्राप्त करना था। क्योंकि धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति तो मानव को सहज थी, परन्तु मोक्ष प्राप्त करना सहज नहीं था।

मोक्ष प्राप्ति के साधनों में महर्षि वाणभट्ट, चरक, सुस्रुत आदि रसमूलक क्रियाओं से जुड़े मध्यकालीन मुमुक्षु थे, जिन्होंने रसज्ञान का विकास कर आयुर्वेद को एक नई दिशा दी है। मंहर्षि पतंजलि आदि वायुमूलक क्रियाओं से जुड़े हुए मुमुक्षु योग-दर्शन के विकास में आगे आये हुए हैं।

मुमुक्षुओं द्वारा अपनायी जाने वाली इन दोनों ही पद्धतियों में वायुमूलक पद्धति अति कष्टकारक थी जिसमें मोक्ष प्राप्ति के लिए प्राण का निरोध चित्तवृत्ति की एकाग्रता के लिए करना मृत्युकारक कष्टों से जुड़ा हुआ था, अतः साधक मोक्ष प्राप्ति के पूर्व ही मृत्यु को प्राप्त होने लगा था, जिसमें हठयोग का दुर्लभ साधन सिद्ध नहीं होता था, जो मोक्ष के लिए राजयोग की प्राप्ति में पहली सीढ़ी का कार्य करता था। इन मृत्युपर्यन्त कष्टकारक वायुमूलक क्रियाओं से बचने के लिए मुमुक्षुओं का ध्यान रसमूलक क्रियाओं की तरफ हो गया, जो वायुमूलक क्रियाओं की अपेक्षा सहज थीं। अतः मुमुक्षुओं द्वारा रससिद्ध करने का मुख्य लक्ष्य जीवन-मुक्ति प्राप्त करना था, जिससे रससिद्धि को जरा-व्याधि नाशक रसायन के रूप में प्राप्त कर उसके सेवन से देहसिद्धि द्वारा स्वस्थ एवं सुदृढ़ शरीर बना सकें, क्योंकि स्वस्थ एवं सुदृढ़ शरीर होने पर ही योग साधन में आत्मतत्व की प्राप्ति सहज थी, अन्यथा आत्मलाभ (मोक्ष) प्राप्त करना सहज नहीं था, क्योंकि कालपाश में जकड़ा हुआ शरीर जरा व्याधि कारणों से आत्मलाभ प्राप्त करने से पूर्व ही नष्ट हो जाता था। जिसकी रक्षा का एक मात्र सहज साधन रसज्ञान था, जिसकी प्राप्ति का उपाय उन्होंने रस प्राप्ति के साधनों में प्रवृत्त होकर पारद के

महत्त्व को सर्वोत्तम कल्याणकारी तन्त्र के रूप में भलीभाँति समझा था, जो चिरस्थायी जीवन बनाने के लिए देहसिद्धि में वेधकृत गुण रखता था।

पारद के वेधकृत गुण को देहबेध के साथ लौहबेध पर अपना कर मनीषियों ने दरिद्रता का नाश करने के लिए लौह (ताम्रादि) धातु को स्वर्ण में परिवर्तन करने का अद्‌भुत कार्य भी शुरू किया था। कुछ आचार्यों का मानना है कि लौहबेध ही देहबेध की कसौटी थी।

यथा

पूर्व लौहे परीक्षेत तद्वो देहे प्रयोजयेत ॥1॥

अर्थात् मनीषियों ने शरीर के महत्त्व को समझते हुए सिद्धपारद की परीक्षा लोहे पर की थी, उनका मानना था कि सिद्ध हुआ पारद लौह धातु को वेध कर कंचन कर देता है, तो निश्चय ही वह शरीर को वेध कर चिरस्थायी (अमर) बना देगा।

यदि पारद के इस वेधकृत गुण को आयुर्वेद की दृष्टि से देखें तो शरीर वातादि दोषों के कारण धातु मलिन होने से रोग बुढ़ापे की पकड़ में आ जाता है, जिसका वेध होने पर शरीर को बनाये रखने वाला ध ातु मलिन नहीं होता। वह स्वर्ण की भाँति सदैव रहने वाला देहसिद्ध हो जाता है।

रससिद्धों का लौहसिद्धि में प्रवृत्त होने का यह मुख्य उद्देश्य बना हुआ था, जब तक पारद लौह को स्वर्ण नहीं बनाता वह तब तक देहसिद्धि के गुण से विमुक्त है, अतः दुख (मरणादि) दरिद्रता (धन का अभाव) को दूर करने के लिए मनीषियों का पहला उद्देश्य लौहबेध कृत पारद सिद्धि का ही था, क्योंकि लौहसिद्धि से ही देहसिद्धि विधान पारद सिद्धि के अन्तर्गत आया हुआ था।

यथा

सिद्धे रसे करिष्यामि निर्दारिद्रयमिदं जगत् ॥2॥

(रसेन्द्र चूड़ामणि)

अन्य

यथा लौहे तथा देहे कर्त्तव्यः सूतकः सदा।
समानं कुरूते देवि! प्रविशन् देहलौहयोः
पूर्व लौहे परीक्षेत तवो देहे प्रयोजयेत्॥ ॥3॥

(रसार्णव)

अर्थात् हे देवी! पारद कर्म (रस शोधन करना) लौह एवं देह के लिये समान रूप से करें, उसकी पहले लौह पर परीक्षा करे, जो लौह में प्रवेश करता है, अर्थात् लौह (ताम्रादि) को स्वर्ण बना देता है उसी पारद का देह पर प्रयोग करें।

यथा

देहलौहमयी सिद्धिं सूते सूतस्ततः स्मृतः ॥4॥

(रसेन्द्र चूड़ामणि)

अर्थात् पारद का प्रयोग देह एवं लौहसिद्धि के लिए ध्यान में रखना चाहिए क्योंकि लौहसिद्धि देने वाले पारद से देहसिद्धि होती है।

लौह एवं देहसिद्धि स्पष्टीकरण

लौहसिद्धि : संस्कारित गुणों से युक्त पारद जब वेधकृत हो जाता है तब वह अग्नि के स्पर्श से उड़ने की अपेक्षा गलित लौह (ताम्रादि) धातु में प्रवेश कर जाता है, जिसे धातुबेध कहते हैं, यह धातुबेध स्वर्ण निर्माण कहलाता है, अर्थात् पारद की वेधकृत शक्ति से लौह धातु कण स्वर्ण के सूक्ष्म मलरहित कणों में परिवर्तित होकर विद्रुम स्वर्ण बन जाता है। जिसे पृथ्वी से निकले स्वर्ण की अपेक्षा अधिक उपयोगी माना जाता है, जिसकी आभा सूर्य के प्रकाश की भाँति तेजोमयी होती है, इसी को लौहसिद्धि कहा जाता है।

देहसिद्धि : लौहसिद्धि में वेधकृत पारद देहसिद्धि के अनुकूल हुआ सेवन करने पर जरा-व्याधि नाशक होता है, जिससे शरीरस्त धातु का लौह धातु की भाँति वेध हो जाता है, अर्थात् वह मलिन कारणों से दूर होने पर नष्ट नहीं होता, जिससे जीवन चिरस्थायी होता है, क्योंकि शरीर का धारण धातु से होता है। इसी को मनीषियों ने देहबेध की क्रियाओं में देहसिद्धि कहा है।

पारद से धातुबेध का विचार रस शास्त्रों में देहबेध के लिए ही था, जो परम मोक्ष देने के लिए प्रयोजन किया गया था।

यथा

न च रस शास्त्रं धातुवादार्थ मेवेति मन्तव्यम्।
देहवेध द्वारा मुक्तरेव परम प्रयोजनत्वात् ॥5॥

(रसेश्वर दर्शन)

गर्भद्रुति लक्षण का स्वरूप

यथा

वह्निव्यतिरेकेपि रसग्रासीकृतानां लोहानां द्रवत्वं गर्भद्रुतिः
गर्भद्रुतिमंतरेण जारणैव न स्यात् ॥ 9॥

(रस चिन्तामणि, रसराज शंकर, वृ.यो.)

अर्थः ग्रास दिए हुए समस्त धातुओं का अग्नि संयोग के बिना ही जो द्रव हो जाना है; उसको गर्भद्रुति कहते हैं क्योंकि गर्भद्रुति के बिना जारण नहीं होता है अथवा

ग्रस्तस्य द्रावणं गर्भद्रुतिरुदाहता ॥ 10॥

(रसरत्न समुच्चय)

अर्थः ग्रास दिये हुए का जो गर्भ में ही गलाना हो उसको गर्भद्रुति कहते हैं। अभ्रकसत्त्व को गर्भद्रावी होने के निमित्त ताम्र और माक्षिक को मिलावें।

यथा

कमलधनमाक्षिकाणां चूर्ण समभागयोजनमिति।
तच्छुद्धाभ्रं शीघ्रं चरति रसेन्द्रो द्रवति गर्भे च ॥ 11॥

(रस चिन्तामणि, रस पद्धति)

अर्थः समभाग एकत्रित किये हुए ताम्र, अभ्रक और सोनामाखी ये पारद में शीघ्र ही मिल जाते हैं और वह पारद शुद्ध अभ्रक को शीघ्र खा जाता है। वह अभ्रक पारद के गर्भ में द्रव भी शीघ्र हो जाता है।

अन्यच्च

बीजानां संस्कारः कर्त्तव्यस्ताप्यसत्त्वसंयोगात्।
तेन द्रवति गर्भे रसराजस्याम्लवर्गयोगेन ॥ 12॥

(रस चिन्तामणि, निघंटुराज, रसराज शंकर वृ.यो.)

अर्थः ताप्यसत्व (सोना मक्खी का सत्व) के संयोग से समस्त बीजों का संस्कार उत्तम है, क्योंकि ऐसा करने से बीज अम्ल वर्ग के योग से पारद के गर्भ में ही द्रव हो जाते हैं।

अन्यच्च

शुद्धं माक्षिकचूर्णं निर्व्यूढं यच्छत गुणं हेम्नि।
तद्धेम चरति सूतो द्रवति च गर्भे रसस्य तुल्यांशम् ॥ 13॥

(धरणीधर संहिता)

अर्थः जिस स्वर्ण में सौगुने शुद्ध सोनामाखी का चूर्ण मिलाया जाता है उस स्वर्ण को पारद समान भाग से चरता है और वह पारद के गर्भ में ही द्रव हो जाता है।

इस प्रकार प्राच्य रस ग्रन्थों में अनेक गर्भ द्रुतियों का वर्णन मिलता है। जिनका मुख्य ध्येय गर्भद्रुति क्रिया विशेष द्वारा पारद की जारण करना है। इस प्रकार पारद में युक्ति पूर्वक गर्भद्रुति कर जारण करने वाला चतुर (वैद्य) अभीष्ट फल की प्राप्ति के स्वरूप अपना कार्य निश्चय ही सिद्ध कर लेता है।

मैंने स्वयं भी विशेष प्रयोगात्मक स्वरूपों द्वारा पारद में ताम्र गर्भद्रुति क्रिया को सिद्ध कर फिर पारद में गर्भद्रुति भाव को पैदा हुए ताम्र का अग्नि में जारण कर विशिष्ट रसौषध के उत्तम रस की प्राप्ति कर आयुर्वेद के क्षेत्र में ऐसा अभूतपूर्व कार्य सिद्ध कर लिया है जो स्वास्थ्य के प्रति अतिशय मंगलकारी सिद्ध हुआ है। इस प्रकार इन गर्भद्रुतियों द्वारा पारद के संयोग से जारित और भी अनेक विशिष्ट रसों को प्राप्त करना सम्भव है जो आयुर्वेद के क्षेत्र में एक नई दिशा के रूप में निकट भविष्य में उभर कर सामने आ सकते हैं।

बाह्यद्रुति संस्कार

अभ्रक जारण के लिये कठिन पदार्थ और अभ्रक सत्त्वादि की बाहर से ही द्रुति करें बस इसी को बाह्यद्रुति कहते हैं।

यथा

बहिरेव द्रुतीकृत्य धनसत्त्वादिकं खलु।
जारणाय रसेन्द्रस्य सा बाह्यद्रुतिरुच्यते ॥14॥

(रसरत्न समुच्चय)

अर्थः बाह्यद्रुति संस्कार भेद से जो - इसका शास्त्रों में वर्णन हुआ है वह अति दुर्लभ कार्य के रूप में देखा गया है; क्योंकि इस क्रियाभेद में धात्वादि कठिन द्रव्यों को क्रिया विशेष द्वारा द्रुति कराना अर्थात् उन्हें पारद की ही भाँति धात्व जलरूप कराकर आसानी के साथ पारद में उसका प्रवेश कराना है। इस प्रकार द्रव्यों की बाह्यद्रुति क्रिया हो जाने से उनके सम्पर्क से पारद का बन्धन निश्चय रूप से हो जाता है, क्योंकि आरोटरूप में अपने समभाग से पारद को बांध

देती है, फिर इस बद्धपारद के भक्षण का फल कल्प पर्यन्त जीवित रहना माना गया है।

यथा

एतास्तु केवलमारोटमेव मिलितानि बध्नंति फलमस्य
कल्पप्रमितमायुः।
किं पूर्वोक्तग्रासकमजारितातः पूर्वोक्तफलप्रदा भवन्ति ॥ 15॥

(रस चिन्तामणि, रसराज शंकर, द्रु.यो.)

द्रुतयोऽपि न सिध्यन्ति शास्त्रे दृष्टा अपि ध्रुवम्।
बिना शंभोः प्रसादेन न सिध्यन्ति कदाचरण ॥ 16॥

(रसराज शंकर)

अर्थः शास्त्र में देखी हुई द्रुतियां श्री महादेव की कृपा के बिना कदापि सिद्ध नहीं होती हैं, अतः महादेव की कृपा का फल प्राप्त होना आवश्यक माना गया है। फिर भी कुछ शास्त्रोक्त द्रुति क्रियाओं का वर्णन करना मैं उचित समझता हूँ।

समांशं सुरगोपस्य सुरदाल्याश्व तद्रजः।
आवापान् कुरूते देवि! कनकंजलसन्निधम् ॥ 17॥

(रसार्णव)

अर्थः इन्द्रगोप (बीरबहूटी) तथा सुरदाली (घघरबेल) सनैय समभाग इन सबों का चूर्ण प्रक्षेप करने (प्रक्षेप कर तपाने) से स्वर्ण जल के समान द्रव्य हो जाता है।

अभ्रक द्रुति

स्वरसेन वज्रवल्ल्याः पिष्टं सौवर्चलान्वितं गगनम्।
पक्वं शराबसम्पुटे बहुवारं भवति रसरूपम् ॥ 18॥

(रसराज सुंदर)

अर्थः अभ्रक में संचरनोंन डालकर वज्रवल्ली (हड़जोड़) के रस की भावना देवें फिर शराब सम्पुट में रखकर गजपुट मे फूंकें इस प्रकार कई बार पुट देवें तो अभ्रक की द्रुति हो जायेगी।

अन्यच्च

मण्डूकास्थिवसाटङ्कहयलालेन्द्रगोपकेः।
प्रतिवापेन कनकं सुचिरं तिष्ठति द्रुतम्॥ 19॥

(रसार्णव)

मण्डूक (मेंढ़क) की अस्थि तथा वसा, टंकण, हयलाला (घोड़े की लार) तथा वीरबहुटी इन सबों का प्रतिवाप (प्रक्षेप) करने से कनक (स्वर्ण) द्रवीभूत होकर बहुत देर तक ठहरता है।

अर्कापामार्गमुसली निचुलं चित्रकं तथा।
कदली प्रोतकी दाली क्षारमेषां तू साधयेत् ॥20॥
गालयेन्माहिषे मूत्रे षड्वारान् सुरवन्दिते।
आवापाद्द्रावयदेतदभ्रसत्त्वादिजं रजः॥
दन्तीदन्तो विशेषेण द्राव्येत् सलिलं यथा ॥21॥

(रसार्णव)

अर्थः मदार, अपामार्ग, मूसली, बड़हर, चित्रक, केला, पोतकी (पोई शाक) तथा दाली (देवदाली-घघरबेल) इन सबों का क्षार बनावें और भैंस के मूत्र में छः बार मिलावें। हे सुर वन्दिते, इसके बाद यह आवाप-(प्रक्षेप) करने से अभ्रक सत्व आदि चूर्ण को द्रव बना देता है। विशेषकर इसका आवाप (प्रक्षेप) हाथी के दाँत को जल की तरह द्रव बना देता है।

अन्यच्च

रसेनोत्तरवारुण्या प्लुतं वक्रान्तजं रजः।
प्रतिवापेन लोहानि द्रावयेत् सलिलोपमम् ॥22॥

(रसार्णव)

अर्थः इन्द्रवारुणी के रस से भावित वैक्रान्त का चूर्ण प्रतिवाप (प्रक्षेप) करने से सभी लोहों को द्रव बना देता है।

अभ्रक द्रुति अंधमूषा में

कर्कोटीफलचूर्णं तू मित्रपंचकसंयुतम्।
तत्तुल्यं चैव धान्याभ्रमम्लैर्मर्धदिनावधि॥
अंधमूषागतं ध्मातं तद्द्रुतिर्भवति ध्रुवम् ॥23॥

(रसराज सुंदर)

अर्थः बांझ ककोड़े के फल का चूर्ण और शहद, घी, गूगल, सुहागा इनके तुल्य धान्याभ्रक को मिलाकर तीन दिन तक पीसें फिर उसको अंधमूषा में रखकर कोयलों में धौंकें तो अभ्रक की पारद के समान तरल द्रुति होती है।

बीज बद्ध रसभस्म का रचनात्मक निरूपण

बीजबद्ध रसभस्म बनाने के लिए पहले ताम्र का शोधन करके उसका चूर्णवत बीज बनाया गया है, जो सुर्ख वर्ण का होता है। जिसका पारद में गर्भ द्रावण, गंधक जारण से अतिशुद्ध हुए पारद में करके किया जाता है, जिसमें पारद अपने समभाग तक ताम्रबीज का ग्रास लेकर उसका चारणा करता है। पारद द्वारा चारण किये हुए ताम्रबीज की गर्भ द्रुति पारद में, ताम्रजीर्ण करने के लिए होती है। जिससे पारद की क्रामण शक्ति बढ़ जाती है और वह ताम्र को आत्मसात करते हुए पिष्टीबद्ध हो जाता है, जो बाद में चूर्ण होकर रोगनाशक पारद की मूर्च्छित अवस्था में आया हुआ इतना तेजयुक्त होता है कि गंधक के साथ मिलने पर गंधक में अग्नि पैदा कर देता है, अर्थात् गंधक का जारण बिना अग्नि के पारद में होने लगता है, पारद में गंधक जारण की यह दुर्लभ प्रक्रिया मेरे गहन शोध में विकसित हुई मानव जाति के लिये आयुर्वेद की अभूतपूर्व उपलब्धि है। जिसमें सुर्ख वर्ण का बीज बद्ध रसभस्म सिद्ध होता है। जिसका उपयोग दीर्घायु जीवन देने के लिए आरोग्य वर्धक है। जिसका प्रायोगिक कार्य पारद के षोडश संस्कारों में आता है, जिनकी सिद्धि का उपाय पुस्तक में पारद शोधन के षोड्श संस्कारों के अन्तर्गत है।

ताम्रजीर्ण रस भस्म सिद्धि-5

ताम्रजीर्ण रसभस्म का उपयोग रस ग्रन्थों में देहसिद्धि के लिये अति उपयोगी रोगमुक्त दीर्घ जीवन के लिये उत्तम रससिद्धि का कार्य माना गया है। जिसकी निर्माण प्रक्रिया गोपनीय रूपों में निर्जीव रस लक्षण के अन्तर्गत दी गई हैं। जिसमें हेमादि लोह धातुओं का जारण पारद में गर्भ-द्रुति संस्कार के अन्तर्गत आया हुआ है। मैंने अपने शोध कार्य में ताम्र-जीर्ण रसभस्म की प्राप्ति का साधन प्राच्य रस ग्रन्थों के अवधारण से ताम्र का बीज सिद्ध करके उसके गंधकादि योग से जारित हुए शुद्ध विभूक्षित पारद में एक तिहाई ताम्र बीज का ग्रास देकर चारण संस्कार कराया है, जिसमें पारद ताम्र को चरता है, अर्थात् अपने गर्भ में धारण कर लेता है। जिसकी बाद में जारण संस्कार की प्रक्रियाओं से भलीभाँति गर्भद्रुति हो जाती है, जोकि पारद के गर्भ में ताम्रजीर्ण हुआ आत्मसात होकर चिकनी लोनी घृत जैसी पिष्टी के रूप में आया हुआ, षड्गुण

गंधक के योग से गंधक की जारण प्रक्रिया में भस्मीभूत हो जाता है। जिसका सिद्धोषध सुर्ख वर्ण का होता है, इस ताम्र जीर्ण रस का एक पल भक्षण करने से मनुष्य निसंदेह त्रिदोष जन्य विकारों से मुक्त रोग रहित देह वाला दीर्घ जीवन प्राप्त करता है, तथा सभी प्रकार के असाध्य रोगों को इस ताम्र-जीर्ण रसभस्म का सेवन दूर कर देता है। वर्तमान में देहोपयोगी आयुर्वेद का यह सर्वोत्तम रसायन है। जिसे मैंने अपने शोध में दुर्लभ रससिद्धि के अन्तर्गत विकसित किया है।

ताम्र रससिद्धि-6

आयुर्वेद की रस चिकित्सा के लिये किये गए मेरे शोध कार्यों में, ताम्र रससिद्धि का कार्य पारद योग से धातु मारण के महत्त्व को शास्त्रोक्त रूपों में आगे लेकर आया हुआ है।

यथा

सिद्धलक्ष्मीश्वर प्रोक्तप्रक्रिया कुशलो भिषक्।
लोहानां सरसं भस्म सर्वोत्कृष्टं प्रकल्पयेत् ॥ 14॥

(रससार पद्धति)

अर्थः रससिद्धों की कही हुई प्रक्रियाओं में कुशल वैद्य पारदयुक्त धातुओं की भस्म बनावें तो वह भस्म सर्वोत्कृष्ट होती है।

अन्यच्च

लोहानां मारणं श्रेष्ठं सर्वेषां रस भस्मना ॥ 15॥

(रसरत्न समुच्चय)

अर्थः समस्त धातुओं को पारद से मारकर भस्म करना सबसे श्रेष्ठ है।

ताम्र रससिद्धि का मेरा प्रायोगिक कार्य सर्वोत्तम धातु मारण के अन्तर्गत किये गए शोध में आया हुआ है, जिसमें ताम्र का पारद में गर्भ द्रावण भलीभाँति कराकर ताम्र का बतासे की भाँति फूला हुआ सुर्ख वर्ण का फुका हुआ भस्म प्राप्त होता है, जो उदर शूल, अम्लपित्त, पाण्डुरोग, मन्दाग्नि, और यकृत के दोषों को नष्ट करता है, तथा कफ, खांसी, स्वांस, हृदय के रोगों में अति लाभकारी है, वमन और विरेचनकर्ता अर्श (बवासीर) को दूर करता है। अल्पमात्रा में लेने से धातु क्षय दोष नष्ट कर वीर्यवर्धक है।

तामेश्वरी महीमय पात्र निरूपण-7

आयुर्वेद में तामेश्वरी महीमय पात्र की रचना अभूतपूर्व है, जिसकी सिद्धि रस ज्ञान की सार्थक उपलब्धियों में मेरें शोध कार्यों के अन्तर्गत मानव-कल्याणकारी रूपों में सहज देखी जा सकती है।

महीमय पात्र का अर्थ होता है, मिट्टी का बना पात्र जिन्हें प्राच्यकाल से कुम्भकार बनाते आ रहे हैं, जिनका उपयोग आज भी मानव जीवन में किया जाता है। जिन्हें मुख्यत: गर्मियों के मौसम में पानी को पीने योग्य बनाए रखने के लिए घड़े के रूप में अधिक उपयोगी माना जाता है, क्योंकि मिट्टी के बने घड़े में जल भर कर रखने से जल शीतल व गुणकारी रहता है। तामेश्वरी महीमय पात्र भी मिट्टी के पात्र की भाँति बना हुआ सक्रिय है, जिसमें पानी भर कर रखने से पानी शीघ्र ही पीने योग्य शीतल होकर अति शुद्ध रोगाणु मुक्त होकर आरोग्यवर्धक गुण रखता है।

ताम्र के बर्तन में जल भरकर पीने का आयुर्वेदिक महत्त्व अति-प्राचीन है, जिसमें तामेश्वरी महीमय पात्र का शोध मानव जीवन के लिए अतिशय कल्याणकारी है, जोकि वैज्ञानिक दृष्टि से महीमय पात्र के अन्तर्गत आया हुआ है।

पारद योग से ताम्र धातु का बनाया गया यह तामेश्वरी महीमय पात्र सम्पूर्ण विश्व में अनूठा है जो मेरे द्वारा की गई अभूतपूर्व रचना के दावे में नूतन आविष्कार के अन्तर्गत है।

तामेश्वरी महीमय पात्र निरूपण

भारतवर्ष में मिट्टी के पात्रों की रचना का कार्य कुम्भकारों द्वारा प्राच्यकाल से हो रहा है, जिसमें बर्तन बनाने योग्य मिट्टी को पानी के योग से नष्टपिष्ट करके बर्तन की शक्ल देकर उसे सुखा लिया जाता है, फिर अग्नि देकर उस मिट्टी के पात्र को पकाया जाता है, जो पकने पर उपयोग में आने वाले बर्तन का रूप ले लेता है, इसी प्रकल्पना से मैंने तामेश्वरी महीमय पात्र की रचना की है, जिसमें पारद के योग से ताम्र-धातु को नष्टपिष्ट करके बर्तन की शक्ल देकर उसे अग्नि के संसर्ग से पकाकर मिट्टी के पात्र की भाँति भंगुर गुण रखने वाला ताम्र धातु का पात्र बना दिया है। इस प्रक्रिया में पहले ताम्र शोधन करते हुए

उसका पूर्णतया नष्टपिष्ट चूर्ण बनाया जाता है जिसका वर्णन रस ग्रन्थों में बीज साधन के अन्तर्गत आया हुआ है, इस सिद्धबीज का संस्कारित पारद सहज ग्रास कर उसको अपने गर्भ में द्रुति कर (गर्भ द्रावण करके) चिकनी पिष्टी जैसा बना देता है, जिसका बर्तन बनाकर रखने से तीन दिन के अन्तर्गत वह चांदी सदृश कठोर पात्र का स्वरूप ले लेता है, जिसको अग्नि में तपाने से ताम्र का पारद के योग से परिपाक होकर भंगुर ताम्र के गुण को लेते हुए, तामेश्वरी महीमयपात्र के रूप में सिद्ध हो जाता है। वर्तमान में रसधातु व्युत्पादन की यह आयुर्वेदिक धातुसिद्धि नूतन आविष्कार के क्षेत्र में मेरे शोधकार्य से जुड़ी हुई जल चिकित्सा के अन्तर्गत आती है, क्योंकि इस पात्र का उपयोग रोगों की निवृत्ति के लिये है, जिसमें जल भरकर, कुछ पल ठहर कर उसे पीने से आरोग्यता का लाभ मिलता है।

पात्र के गुण

पात्र में जल भरकर रखने से वह जल जीवाणुओं से मुक्त व शीतल रहता है, तथा जल के साथ ताम्र की होने वाली महीमय रासायनिक क्रिया उसे औषधि के रूप में परिवर्तित कर रक्त की संचार शक्ति को बढ़ाने के लिये पात्र में रखे जल के साथ होती है, जिसमें पात्र के प्रभाव से जल आक्सीकृत होता हुआ जीवाणु मुक्त हो जाता है, जिसको पीने से शरीर में रक्ताणुओं को ऊर्जा मिलती है, तथा रक्त की संचार प्रक्रिया में बाधकता का नाश होने लगता है, जो हृदयादि से जुड़े अनेक प्रकार के रोगों में अतिशय लाभकारी सिद्ध हो सकता है, क्योंकि मैंने इस पात्र के जल का सेवन करके उसके उपयोगी जीवनदेय गुण की आरोग्यता का लाभ प्राप्त करने में आयुर्वेद विज्ञान की दृष्टि से देखा है, जिसका वैज्ञानिक विश्लेषण जल के पात्र द्वारा की जाने वाली रासायनिक क्रिया के अन्तर्गत आता है।

पारद शिवलिंग का निर्माण

शिव में आस्था रखने वाले श्रद्धालुओं के लिये पारद शिवलिंग का निर्माण कार्य ताम्र बीज की सिद्धि से पारद को जमाकर किया है। जो प्राच्य-काल से ही रसग्रन्थों में दुर्लभ प्रक्रिया रही है जिसमें श्वेत रजत समान चमकने वाला शिवलिंग अद्‌भूत प्रभावशाली गुण रखता है जिसका निर्माण श्रद्धालुओं के अनुरोध पर किया जा सकता है।

स्वर्ण-तन्त्रम्

रसशास्त्र का धातुवाद-आधारित अद्भुत एवं
सरल प्रयोगों का संग्रहग्रन्थ

व्याख्याकार
श्री श्यामसुन्दर शुक्ल

शुभाशंसा-लेखक
प्रो. चन्द्रभूषण झा

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा आयुर्विज्ञान ग्रन्थमाला
97

परशुराम-शिवसंवादात्मकं

स्वर्णतन्त्रम्

'स्वर्णदा' भाषाभाष्यसमन्वितम्

व्याख्याकार:
श्री श्यामसुन्दर शुक्ल

शुभाशंसा-लेखक
प्रो० चन्द्रभूषण झा

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

कठिनाई से सिद्ध होने वाली विधा है। विना दक्ष गुरु के सान्निध्य के इसमें सिद्धि पाना अत्यन्त ही कठिन है।

रसशास्त्र की इन विधाओं के प्रति खूब आकर्षण रहा तथा अनेक धर्म, सम्प्रदाय एवं पन्थ के लोगों ने इस क्षेत्र में अपना योगदान किया। इस विषय पर अनेक ग्रन्थों की रचना भी हुई। ऐतिहासिक दृष्टि से मध्य काल ८वीं शताब्दी से लेकर १७वीं शताब्दी की अवधि तक को इसके विकास का स्वर्णिम काल माना जाता है। इस काल में अनेक रसग्रन्थों की रचना भी हुई। प्रारम्भिक काल के कुछ मौलिक ग्रन्थों के बाद इस विषय पर भी अनेक संग्रहग्रन्थ की रचना हुई। प्रत्येक ग्रन्थों की कुछ न कुछ विशेषता रही है और यह विशेषकर रसशास्त्र के विशेष पक्ष को विस्तार देने के रूप में द्रष्टव्य है। किसी ग्रन्थ में धातुवाद को, किसी में धातुवाद से जुड़ी सहयोगी प्रक्रियाओं को तो किसी में देहवाद एवं देहवाद से जुड़े औषधीय रसकल्प; यथा— भस्म, पर्पटी, कूपीपक्व एवं अन्य रसयोगों को विस्तार दिया गया। इस क्रम में रसार्णव, रसहृदयतन्त्र (धातुवाद-विषयक), रसरत्नाकर, रसप्रकाशसुधाकर, रसेन्द्रचूड़ामणि, रसरत्नसमुच्चय आदि (देहवाद-विषयक) ग्रन्थ द्रष्टव्य हैं।

इसी क्रम में 'स्वर्णतन्त्र' भी रसशास्त्र का धातुवाद-आधारित एक संग्रहग्रन्थ है। इसके अनेक उद्धरण रसार्णव, रसहृदयतन्त्र से लिये गये हैं। ग्रन्थ की विषयसामग्री देह-लौहवादात्मक—दोनों प्रकार की है। बहुश: प्रयोग अत्यन्त सरल प्रकार के हैं तथा परीक्षणीय हैं एवं जिस प्रकार के फलादेश किये गये हैं, यदि ऐसा हो सके तो मानव समुदाय के लिये यह अत्यन्त कल्याणकारी सिद्ध हो सकता है। वैसे रसशास्त्र की क्रियायें और उसकी सिद्धि गुरु-शिष्यपरम्परा पर आधारित रही हैं। प्रक्रिया में भाग लेने वाले द्रव्य, यन्त्रोपकरण, अग्नि एवं समय आदि अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। सिद्धि में सबका सम्यक् समायोजन आवश्यक है। अत: सुवर्णतन्त्र के प्रयोग अनुसन्धेय एवं परीक्षणीय हैं। अनुसन्धान से जुड़े लोगों के लिये यह ग्रन्थ एक बहुत बड़ा भण्डार-सदृश है। पारद स्थिरीकरण, मारण, वेध-जैसी प्रक्रियाओं का इसमें बहुत ही विशाल संग्रह है। विद्वान् हिन्दी भाष्यकार श्री श्यामसुन्दर शुक्ल जी ने इस दुर्लभ ग्रन्थ, जिसकी दुर्लभ प्रतिलिपि इन्हें किन्ही नेपाली महाशय से प्राप्त हुई, जिस पर इन्होंने 'स्वर्णदा' भाषाभाष्य लिखकर रसशास्त्र को एक अनुपम भेंट साहित्यसमृद्धि के रूप में दिया है। ग्रन्थ का रचनाकाल अथवा लेखक के विषय में कोई विवरण उपलब्ध नहीं है। ग्रन्थ के विषय की प्रस्तुति ईश्वर (शिव) एवं परशुराम (परशुराम-शिवसंवादात्मक) संवाद के रूप में है। श्री परशुराम अपनी जिज्ञासाशान्ति-हेतु ईश्वर (शिव) से प्रश्न करते हैं और ईश्वर उसका समाधान देते हैं। इस संवाद से ही ज्ञात होता है कि इसका पूर्वभाग

रत्नखण्ड है; जिसमें हीरा, पन्ना, मोती, नीलम, माणिक्य एवं वैदूर्य आदि रत्नों की निर्माणविधि, दो हजार प्रकार की पारद की गुटिका, छः सौ प्रकार का पारदभस्म, धातुओं के आठ कल्प, सात सौ प्रकार का हरतालभस्म आदि विषय साठ हजार श्लोकों में कहे गये हैं। इन सबके बाद श्रीपरशुराम जी ने भगवान् शंकर से कहा कि इतनी बातें तो आपने बताईं; किन्तु स्वर्णनिर्माण की विधि अभी तक आपने नहीं बताई। श्री परशुराम जी द्वारा प्रार्थना किये जाने पर भगवान् शंकर ने 'स्वर्णतन्त्र' नामक प्रथम कल्प कहकर इसका उपदेश किया।

ग्रन्थ का विषय धातुवेध पर आधारित है। स्वर्ण-रजत् आदि का भेद बताकर अनेक प्रकार के वानस्पतिक कल्पों, जो धातुवेध में सहायक हैं, उन्हें तैयार करने यथा—तैलकन्द कल्प, कटुकूष्माण्ड कल्प, कटुरक्तविम्बी आदि अनेक कल्पों की विधि फलनिर्देश-पूर्वक बतलाई गई है। इनमें से बहुशः धातुवेध के साथ-साथ रसायन गुणसम्पन्न बतलाये गये हैं। अन्त में भस्मोपयोगी पुट एवं पारद कर्मोपयोगी यन्त्रों का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

स्वर्णतन्त्र ग्रन्थ अद्भुत एवं सरल प्रयोगों पर आधारित है। आवश्यकता है कि इन प्रयोगों को करके उन्हें सिद्ध किया जाय। रसशास्त्र के क्षेत्र में कार्य करने वालों के लिये यह ग्रन्थ परम उपयोगी सिद्ध होगा।

ग्रन्थ के टीकाकार श्री श्यामसुन्दर शुक्ल जी को बधाई एवं प्रकाशक महोदय को साधुवाद देता हूँ; जिन्होंने इस दुर्लभ ग्रन्थ को प्रकाशित कर अध्येताओं के लिये सर्वसुलभ कराया तथा रसग्रन्थों की शृंखला में अभिवृद्धि की है।

पूर्वपीठिका

यह ग्रन्थ रसायन शास्त्र के ग्रन्थों में उत्तम कोटि का है, जिसकी प्रतिलिपि एक नेपाली महाशय से मुझे प्राप्त हुई थी। इसका प्रारम्भ शङ्कर और परशुराम के संवाद से हुआ है। इसके पूर्व भाग का नाम 'रत्नखण्ड' है, जिसमें रत्नों (हीरा, पन्ना, मोती, नीलम, पुखराज, माणिक्य, वैदूर्य आदि) के बनाने का विधान विवेचित है, दो हजार प्रकार की पारदगुटिका बनाने का विधान वर्णित है एवं छः सौ प्रकार से पारदभस्म बनाने की विधि के साथ-साथ धातुओं के आठ कल्प भी वर्णित हैं। इसमें साठ हजार श्लोक हैं। हरितालभस्म बनाने के सात सौ प्रकारों का भी इसमें वर्णन है। इस प्रकार परशुरामजी ने शङ्कर से कहा है और पुनः पूछा है कि पूर्वोक्त बातें तो आपने बता दीं; किन्तु स्वर्ण और रजत बनाने की क्रिया को आपने अभी तक नहीं सुनाया। इसलिये अब आप इसको भी बताने का कष्ट करें। इस प्रश्न के उत्तर में शङ्करजी ने कहा कि यह क्रिया विशेष रूप से पारद द्वारा सम्पन्न की जाती है अथवा हरिलाल द्वारा। पारद का बन्धन तीन प्रकार से होता है—काष्ठ औषधि से, धातुओ से और तैल से। इसी प्रकार स्वर्ण भी तीन प्रकार का होता है—औषधिजन्य, धातुजन्य और भूमिजन्य (खनिज)। इनमें काष्ठौषधिजन्य स्वर्ण का नाम 'जाम्बूनद', धातुजन्य स्वर्ण का नाम 'गाङ्गेय' और खनिज स्वर्ण का नाम 'सारस्वत' है। इनमें से प्रथम जाम्बूनद स्वर्ण ही उत्तम कोटि का होता है; तदनन्तर द्वितीय गाङ्गेय स्वर्ण मध्यम कोटि का एवं तृतीय सारस्वत स्वर्ण निकृष्ट कोटि का होता है। इसी प्रकार रजत भी तीन प्रकार का होता है। नाग (शीशा), वङ्ग (रांगा) और पारद को 'रजत' ही कहा गया है। यदि कालिका (कालिख) के साथ नाग, वङ्ग और ताम्र का वेध होता है तो वह रजत ही कहा जायेगा। इसी प्रकार शुद्ध ताम्र, रजत और लोह—इन तीनों को 'स्वर्ण' कहा गया है। ऐसे ही 'कामधेनु' (ग्लास और कटोरी) का भी वर्णन है, जो पारद और गन्धक से बनाई जाती है। इससे भी स्वर्ण और रजत बनता है। शङ्करजी ने इस प्रकार से वर्णन करते हुये एक-एक औषधियों के तैलकल्प से आरम्भ करके गन्धकपिष्टी तक कुल सतहत्तर कल्पों का वर्णन किया है। किसी कल्प में किसी से समान अंश से वेध, किसी में अर्धांश से, किसी में चतुर्थांश से, किसी में दशमांश से, किसी में बीस अंश से आरम्भ करके पद्मांश और शङ्खांश से, तो किसी में स्पर्श और शब्दमात्र से ही देह और लोह के वेध का वर्णन किया है। इसमें विशेषता यह है कि पूर्व में लोहों (नाग, वङ्ग,

ताम्र, लौह, रजत और स्वर्ण) को वेध करने के पश्चात् जब उसका धात्वन्तर में परिवर्तन अर्थात् नाग जब रजत अथवा स्वर्ण हो जाय, इसी प्रकार एक धातु से जब दूसरी धातु बन जाय तब शरीर के लिये उसका उपयोग करने पर शरीर का भी परिवर्तन (कायाकल्प) होकर रोगी से निरोग और वृद्ध से युवा अथवा कुमारावस्था में परिवर्तन हो जाता है। इसके आगे पाँच राजियों का वर्णन है, जिससे स्वर्ण को उत्तम बनाया जाता है और बुभुक्षित पारद में ग्रास दिया जाता है। इसके अनन्तर हरिताल को पारद में देने का विधान बताया गया है। यदि गन्धक प्राप्त न हो तो उससे स्वर्ण बन कर रजत ही बनेगा—यह भी स्पष्ट किया गया है। उसके आगे चार प्रकार से हरिताल तैल के बनाने की क्रिया वर्णित है। उसके पश्चात् पाषाणद्रुति (रत्नों को द्रवरूप से स्थायी रखने की क्रिया) का वर्णन है और उपरसों के सत्त्व बनाने की क्रिया भी वर्णित है। उसके पश्चात् तीक्ष्ण जल की क्रिया का वर्णन किया गया है। इसके अन्त में अभ्रक की द्रुति का वर्णन किया गया है। इन द्रुतियों से पारद में ग्रास देकर नवरत्नों और स्वर्णादि धातुओं तथा अभ्रक के पात्रों को बनाने की क्रिया का भी वर्णन है, यह क्रियायें संसार को आश्चर्य में डालने वाली हैं। इसके आगे तैलकल्प है, जिसमें तीक्ष्ण, गन्धक, भूनाग, वत्सनाभ और संखिया के तैल बनाने का विधान वर्णित है। इसके पश्चात् हीरे का भस्म बनाने का विधान और पारद में उसके ग्रास का वर्णन किया गया है। इन सबके अन्त में तुत्थभस्म की क्रिया का वर्णन है, जिसको जानने के लिये रासायनिक जन सदा आकांक्षित रहते हैं। इसको वे लोग 'गुरुभस्म' भी कहा करते हैं। इतने विषयों की चर्चा भगवान् शङ्कर ने इसमें की है। ग्रास के प्रसङ्ग में कहा गया है कि सर्वप्रथम अभ्रकग्रास और अन्त में स्वर्ण आदि का अथवा राजियों का ग्रास देना चाहिये; किन्तु ग्रास के साथ तुत्थभस्म मिला कर तप्त खरल में गन्धक तैल के साथ मर्दन करने से ही अभ्रक अथवा स्वर्णादि धातुओं के द्रुतियों की पारद में गर्भद्रुति होती है अर्थात् सबको पारद अपने में आत्मसात् कर लेता है और पारदमात्र ही शेष रह जाता है। तदनन्तर कूपी में रखकर पाचन करने से पारद वेधक और रञ्जक होता है। इसी प्रकार हीरे के भस्म का भी ग्रास देकर भस्म करके खोट बनाया जाता है, वह खोट लोह और शरीर का सहस्रांश से वेध करता है, जिससे शरीर पूर्ण आरोग्ययुक्त होकर चिरस्थायी हो जाता है। आत्मसाक्षात्कार के साधन में यह पूर्ण सहायक होता है। इस रसायन से दुःख और दारिद्र्य—दोनों का नाश होता है। कहा भी गया है—

रसायनञ्च तत्प्रोक्तं जराद्रारिद्र्यनाशनम्।

विषयानुक्रमः

॥ श्रीः ॥

परशुराम-शिवसंवादात्मकं

स्वर्णतन्त्रम्

'स्वर्णदा' भाषाभाष्यसमन्वितम्

परशुराम उवाच

देव देव! महादेव! सिद्धिबुद्धिफलप्रद!।
पूर्वं संसूचिता सिद्धिं रसायनपरा वरा ॥१॥
यस्याः साधनमात्रेण स्वराट्तुल्यो भवेन्नरः।
तां सिद्धिं वद मे देव! यदि त्वं भक्तवत्सलः ॥२॥

स्व-जिज्ञासाशमनार्थ श्री परशुराम भगवान् महादेव से बोले कि हे देवों के देव! महादेव!! सिद्धि और बुद्धि के फल को प्रदान करने वाले!!! आपने इस तन्त्र के व्याख्यान से पूर्व रसायनपरक श्रेष्ठ सिद्धियों को सम्यक् रूप से सूचित (विवेचित) किया है, जिसके साधनमात्र से ही सामान्य मनुष्य भी राजा के समान हो सकता है। हे देव! यदि आप भक्तों के प्रति कृपाभाव रखने वाले हैं तो उसी सिद्धि को मुझसे कहने की कृपा करें।।१-२।।

पूर्वन्तु कथितं देव! रत्नतन्त्रं त्वया त्वहम्।
गुटिकाऽपि कथिता पूर्वं सहस्रद्वितीया शिव! ॥३॥
पारदः कथितः पूर्वं षट्शतं मृतरूपकः।
धातूनामष्टकल्पोऽपि पूर्वमेव प्रकाशितः ॥४॥
हरितालस्तु कथितः शतसप्तप्रभेदतः।
किन्तु स्वर्णाख्यतन्त्रन्तु न त्वया कथितं प्रभो ॥५॥

हे देव! इसके पूर्व आपने रत्नतन्त्र (रत्न बनाने की विधि) का मेरे प्रति उपदेश किया है। हे शिव! दो हजार प्रकार की गुटिकाओं की निर्माण-विधि को भी आपने मुझे

स्पष्ट रूप से बतलाया है। साथ ही छ: सौ प्रकार के पारदभस्मों (मृतरूप), धातु के आठ कल्पों एवं सात सौ प्रकार के हरिताल की क्रियाओं को भी आपने मेरे प्रति स्पष्टत: निरूपित कर दिया है; किन्तु स्वर्णतन्त्र (स्वर्ण बनाने की प्रक्रिया) को अभी तक आपने नहीं बताया है।।३-५।।

कश्यपेन महेशान! भर्त्सितोऽस्मि महेश्वर!।
भूमिदानं मया दत्तमृषये कश्यपाय वै ॥६॥
कश्यपेन त्वहं प्रोक्तो भूमिभागं त्यज प्रभो।
स्थानार्थन्तु महेशान! रत्नाब्धि: प्रार्थितो मया ॥७॥
बाणमात्रं स्थलं तेन मह्यं दत्तं महेश्वर!।
स्थानं प्राप्तं महेशान! भक्षणं मम नास्ति वै ॥८॥
भक्षणं देहि मे नाथ! यदि पुत्रोऽस्मि शङ्कर!।

हे महेश्वर! हे महेशान!! क्षत्रियों को पराजित करके सम्पूर्ण भूमि को जब मैंने ब्राह्मणों को दान में दे दिया, तो उनमें से कश्यप ऋषि द्वारा मैं अत्यधिक अपमानित किया गया और कहा गया कि इस भूमि का परित्याग कर तुम अन्यत्र चले जाओ; क्योंकि यह भूमि तो अब मेरी हो गई। उनके द्वारा इस प्रकार कहने पर अपने विश्राम के लिये मैंने समुद्र से स्थान प्रदान करने की याचना की। हे महेश्वर! मेरी प्रार्थना से द्रवित होकर उन्होंने एक बाण के बराबर स्थान मुझे दे दिया। हे महेशान! इस प्रकार विश्राम के लिये स्थान तो मैंने प्राप्त कर लिया; किन्तु मेरे लिये भोजन की व्यवस्था अभी तक नहीं हो पाई है। हे नाथ! हे शङ्कर!! यदि मैं आपका पुत्र हूँ तो मेरे लिये भोजन की व्यवस्था करने का कष्ट करें।।६-८।।

श्रीश्वर उवाच

शृणु राम! प्रवक्ष्यामि रहस्यातिरहस्यकम् ॥९॥
स्वर्णतन्त्रमिदं तन्त्रं कल्परूपेण कथ्यते।
तत्राद्यं स्वर्णतन्त्रस्य कल्पं शृणु सुपुत्रक! ॥१०॥

परशुराम की दीनतापूर्ण प्रार्थना को सुनकर भगवान् शङ्कर कहते हैं कि हे परशुराम! रहस्यों में भी परम रहस्य को मैं तुमसे कहता हूँ, सावधान होकर श्रवण करो। हे पुत्र! इस स्वर्णतन्त्र को कल्परूप में कहा जाता है, उसमें से 'स्वर्णतन्त्र' नामक प्रथम कल्प का मैं कहता हूँ, तुम श्रवण करो।।९-१०।।

तत्रोपधातुधातूनां निर्णय: कथ्यते शृणु।
सुवर्णं त्रिविधं प्रोक्तं भूमिजं धातुजं तथा ॥११॥

धातुमात्रे क्षिपेत्तत्तु लक्षवेधी भवेद् ध्रुवम्।

उस पारदभस्म के भक्षण से निश्चित रूप से (वृद्ध) मनुष्य भी कामदेव के समान हो जाता है। उसके (गिरे हुये) दाँत पुन: निकल आते हैं और उसके सम्पूर्ण केश काले हो जाते हैं। यदि किसी धातु को द्रवित करके इसके भस्म को उसमें मिलाया जाय तो यह उसका लक्षांश से वेध करता है।।१०।।

तस्य पत्ररसेनैव तालं यामाष्टकं खलेत्॥११॥
शरावसम्पुटं कृत्वा तालं च मृत्पुटे ददेत्।
पुटं गजाख्यं दानेन ततः सिद्धो भविष्यति॥१२॥
तस्य सम्भक्षणात्पुत्र! कृष्णकेशो न संशयः।
धातुमात्रे तु तं दद्याच्छतवेधी भवेद् ध्रुवम्॥१३॥

इस कल्पवृक्ष के पत्तों के रस के साथ हरिताल को चौबीस घण्टे तक खरल कर शरावसम्पुट के द्वारा बन्धन करके गजपुट की अग्नि देने पर हरिताल सिद्ध हो जाता है। हे पुत्र! उस सिद्ध हरिताल के भक्षण से सफेद बाल भी काले हो जाते हैं। किसी भी धातु को द्रवित करके उसमें यदि सिद्ध हरिताल को मिला दिया जाय तो उसका निश्चित रूप से वेध हो जाता है।।११-१३।।

तत्फलस्य रसं नीत्वा ताम्रद्रावे विनिःक्षिपेत्।
तत्ताम्रं जायते शुद्धं स्वर्णं जाम्बूनदप्रभम्॥१४॥

इस सिद्ध हरिताल के फलों के रस को निकाल कर यदि द्रवित ताम्र में मिला दिया जाय तो वह ताम्र जाम्बूनद स्वर्ण की कान्ति-सदृश कान्ति से समन्वित शुद्ध सुवर्ण हो जाता है।।१४।।

तत्फलस्य रसं नीत्वा वङ्गे नागे विनिःक्षिपेत्।
तत्तारं जायते शुद्धं कुन्दपुष्पसमप्रभम्॥१५॥

उस हरिताल के फलों के रस का यदि नाग एवं राङ्गा में निक्षेप किया जाय तो वह नाग एवं राङ्गा कुन्दपुष्प के सदृश कान्ति को धारण करने वाला शुद्ध रजत में परिवर्त्तित हो जाता है।।१५।।

एवञ्च धातुमात्रेऽपि तत्फलस्य रसं क्षिपेत्।
तत्क्षणाद्वेधमायाति स्वर्णं स्वर्णत्वमाप्नुयात्॥१६॥
रौप्यं रौप्यत्वमायाति शतवेधी भवेत्सुतः॥१७॥

इसी प्रकार धातुमात्र में भी इसके फलों के रस का निःक्षेप करने पर यह तत्क्षण

ही उसका वेध कर देता है एवं निम्न कोटि का सुवर्ण भी उत्तम कोटि के सुवर्ण में परिवर्त्तित हो जाता है। हे पुत्र! इसी प्रकार से निम्न कोटि वाला रजत भी उत्तम कोटि के रजत में परिवर्त्तित होते हुये स्वयं शतवेधी हो जाता है। यह सभी सिद्धस्वर्णकल्प की महिमा है।।१६-१७।।

●

१०. दग्धरोहाकल्पः

दग्धरोहाम्प्रवक्ष्यामि रसबन्धकरीं सुत!।
स्पर्शवेधे तु सा ज्ञेया सर्वकामार्थसाधिनी ॥१॥
शस्त्रच्छिन्ना तु सा राम! दग्धा पावकेन वा।
प्ररोहति क्षणाद्दिव्या दग्धाच्छिन्ना महौषधिः ॥२॥
रक्तं पीतं सितं कृष्णं तस्याः पुष्पं प्रजायते।
चणकस्येव पत्राणि सुप्रसूतानि लक्षयेत् ॥३॥
सा स्थिता गोमतीतीरे गङ्गायामर्बुदे गिरौ।
उज्जयिन्या दक्षिणतो वनान्तेषु च दृश्यते ॥४॥
तस्य काष्ठं समादाय ह्यग्निमध्ये विनिःक्षिपेत्।
स चाङ्गारो भवेद्विप्र! तदङ्गारन्तु वापयेत् ॥५॥
अङ्गारो वृक्षतां याति तं वृक्षं संग्रहेत्सुत!।

हे पुत्र परशुराम! अब मैं रस (पारद) का बन्धन करने वाले दग्धरोहा कल्प को तुमसे कहता हूँ, जो कि स्पर्शमात्र से ही वेध करता है एवं समस्त कार्यों को सिद्ध करने वाला होता है। हे राम! शस्त्र से छिन्न (कट) हो जाने अथवा अग्नि द्वारा दग्ध हो जाने (जल जाने) पर भी क्षणमात्र में ही यह दिव्य औषधि पुनः उत्पन्न हो जाती है। इसके पुष्प रक्त, पीत, श्वेत और कृष्ण वर्ण के होते हैं। चने के समान इसमें बहुत-से पत्ते निकलते हैं। यह गोमती अथवा गङ्गा के तीर पर अथवा अर्बुद पर्वत पर, उज्जयिनी के दक्षिण अथवा वनों के समीप में मिलती है। हे पुत्र! इसके काष्ठ (लकड़ी) को लेकर अग्नि में डालने के पश्चात् उसके जल कर अङ्गार बन जाने के बाद यदि उस अङ्गार को भी पुनः भूमि में आरोपित कर दिया जाय अर्थात् गाड़ दिया जाय तो वह अङ्गार ही पुनः वृक्ष बनकर निकल आता है। उस पुनरुज्जीवित वृक्ष का ध्यान से संग्रह कर लेना चाहिये।।१-५।।

तत्पश्चाङ्गरसं नीत्वा पारदे तालकेऽथवा ॥६॥

तं पारदं भक्षयेद्धि वलीपलितनाशनः ॥७॥

रक्त वर्ण के कनैल के पञ्चाङ्ग के रस को निकालने के पश्चात् शुद्ध पारद को खरल में रखकर उस रस को उसमें ड़ालकर मर्दन करे। इसी प्रकार बार-बार रस दे-देकर मर्दन करे। कम से कम २०-२१ बार हो जाय तब अग्नि दे। हे पुत्र! इससे उस पारद का मारण हो जाता है। वह मृत पारद भक्षण करने पर वली-पलित का नाश करने वाला होता है।।५-७।।

●

३९. कृष्णकरवीरकल्पः

करवीरं कृष्णवर्णं कृष्णकेशरसंयुतम्।
समानीय प्रयत्नेन प्रयोगञ्च समारभेत् ॥१॥
तत्पञ्चाङ्गरसं विप्र! पारदे च विनिक्षिपेत्।
पारदो मृतिमायाति मूषायां दापनेन च ॥२॥
अग्निं दत्वा प्रयत्नेन रसं दद्यात्पुनः पुनः।
स पारदः सिद्धिरूपः सर्वभक्षी भवेत्सुत! ॥३॥

हे राम! अब कृष्ण कनैल के कल्प को सुनाता हूँ। उसके पुष्प और केशर— दोनों ही कृष्ण वर्ण के होते हैं। उन कृष्ण वर्ण वाले पुष्प एवं केशर को सावधानी-पूर्वक लाकर प्रयोग करना चाहिये। हे विप्र! शुद्ध पारद को मूषा में रखने के बाद कृष्ण कनैल के पञ्चाङ्ग के रस को उसमें ड़ालकर अग्नि में तपावे। तदनन्तर स्वाङ्गशीतल करने के बाद पुनः रस ड़ाले। इसी प्रकार २०-२१ वार अग्नि देने से उस पारद का मरण हो जाता है। हे पुत्र! वह पारद सिद्धिस्वरूप हो जाता है और उसका सेवन करने वाला मनुष्य सर्वभक्षी होता है।।१-३।।

पारदन्तु समानीय मुनिवारन्तु संखलेत्।
यदि कर्दमतामेति गुटिकाञ्च समाचरेत् ॥४॥
मुखस्थं कारयेत्ताञ्च खेचरो भुवि जायते।

दूसरी विधि यह है कि शुद्ध पारद को खरल में रखकर सात बार रस का शोषण करते हुये उसका मर्दन करे। यदि वह कीचड़ के समान हो जाय तो उसकी गुटिका बनाकर उस गुटिका को मुख में धारण करने से पृथ्वीवासी मनुष्य आकाश में उड़ने योग्य हो जाता है।।४।।

शुद्धताम्रं समानीय कृष्णस्याथ रसं ददेत् ॥५॥

पुनः पुनः तत्र दद्याद्वज्रमूषागतं धमेत् ।
रसं दद्यात्पुनस्तत्र तत्क्षणात्स्वर्णतां व्रजेत् ॥६॥

तीसरी विधि यह है कि शुद्ध ताम्र को द्रवित करके कृष्ण वर्ण के कनैल के रस को उसमें डाले। इस प्रकार बार-बार रस ड़ालने के पश्चात् वज्रमूषा में उस ताम्र को रखकर धौंके और उसमें इसके रस का भी निक्षेप करे। ऐसा करने से वह ताम्र स्वर्णरूप में परिणत हो जाता है।।५-६।।

ताम्रं वङ्गं तथा नागं चैकीकृत्य प्रयत्नतः ।
वज्रमूषागतं कृत्वा तत्र तस्य रसं ददेत् ॥७॥
तद्रौप्यं जायते शुद्धं कुन्दपुष्पसमप्रभम् ॥८॥

चौथी विधि यह है कि ताम्र, रौप्य और नाग को एक साथ द्रवित करके वज्रमूषा में रखने क पश्चात् इसके रस को देकर धौंकने से सब के सब कुन्दपुष्प के समान प्रभा वाले शुद्ध रजत हो जाते हैं।।७-८।।

●

४०. रस(पात्ररूपा कामधेनु)कल्पः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि दिव्यङ्कल्पं रसस्य च ।
कामधेनुर्दिव्यरूपा रसायनकरा परा ॥१॥
तस्याः संग्रहमात्रेण रसायनपरो भवेत् ।

हे राम! अब पारद के दिव्य कल्प को सम्यक् रूप से कहता हूँ, जिससे कामधेनु (कटोरी) बनती है। वह दिव्य रूप की कामधेनु परम रसायन के समान होती है। उसके संग्रह करने से मनुष्य रसायनज्ञ हो जाता है।।१।।

अथ द्वादशमाशानां पात्रन्तु घृतपात्रवत् ॥२॥
रौप्यपात्रं पुरा कृत्वा तत्र निम्बुरसं ददेत् ।
दिव्यनिम्बुरसानां हि शतद्वादशसम्मितम् ॥३॥
तत्पात्रेषु रसं दत्वा त्वग्नौ च स्थापयेत्सुत ।
रसे जीर्णे द्विजश्रेष्ठ! पुनर्निम्बुरसं ददेत् ॥४॥
श्रीसूर्यशतनिम्बूनां रसं तत्र दहेत्सुत ।
एवं सर्वरसे जीर्णे कामधेनुर्भवेद् ध्रुवम् ॥५॥
कामधेनुर्भवेत्सिद्धा सर्वसिद्धिकरी मता ।
तत्पात्रन्तु द्विजश्रेष्ठ! चाग्नौ संस्थापयेत्सुत! ॥६॥

सप्तरात्रप्रयोगेण किन्नरैः सह गीयते।
जीवेद्वर्षसहस्राणि जरारोगविवर्जितः ॥२१॥
नव नागबलो वीरः कृष्णकेशः प्रभेक्षणः।

उस तैल में घृत मिलाकर धान्य के ढ़ेर में एक मास तक रखने के बाद उसे निकाल कर शुद्ध शरीर वाला साधक अपने अग्निबल की शक्ति के अनुसार सुखकारक मात्रा को ग्रहण करे। भूखलगने पर उसे दूध और मूँग का यूष ग्रहण करना चाहिये; साथ ही निर्वात स्थान में निवास करना चाहिये। इस प्रकार सात रात्रि तक प्रयोग करने से वह साधक किन्नरों के साथ गीत गाने लगता है और जरा-रोग से मुक्त होकर सहस्र वर्ष तक जीवित रहता है। वह नौ हाथियों के बल से युक्त हो जाता है, उसके केश काले हो जाते हैं एवं वह प्रकाशपूर्ण दृष्टि वाला हो जाता है।।१९-२१।।

अथवैकं भक्षयेद्बीजं तिलशर्करया सह ॥२२॥
मासमात्रप्रयोगेण पूर्वोक्ताँल्लभते गुणान्।

अथवा पलाश के एक-एक बीज को तिल और शक्कर के साथ एक मास तक ग्रहण करने से भी व्यक्ति में उपर्युक्त समस्त गुण आ जाते हैं।।२२।।

अथवा ब्रह्मवृक्षस्य मृदुपत्राणि त्रोटयेत् ॥२३॥
तच्चूर्णं प्रसृतिमात्रं तक्रेण सह भक्षयेत्।
मासमात्रप्रयोगेण शुक्लकेशाः पतन्ति च ॥२४॥
द्वितीये मासि भ्रमरतुल्यकेशा भवन्ति च।
सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः सहस्रायुर्भवेन्नरः ॥२५॥
अत्र कल्पे यथेष्टां हि चेष्टाहारविहारकाः।

अथवा पलाश के कोमल पत्तों को एकत्र कर उन्हें छाया में शुष्क करने के बाद सूक्ष्म चूर्ण बनाकर उसकी एक प्रसृति (दो पल = एक मुट्ठी) मात्रा लेकर तक्र अर्थात् मट्ठा के साथ एक मास तक भक्षण करने से शिर के श्वेत बाल गिर जाते हैं एवं द्वितीय मास में शिर पर भ्रमर के समान कृष्ण और आकुञ्चित (घुंघुराले) बाल निकल आते हैं। सम्पूर्ण व्याधि से मुक्त होकर वह सहस्र वर्ष की आयु वाला हो जाता है एवं इस कल्प में यथेच्छ चेष्टायें तथा आहार-विहार करने में समर्थ होता है।।२३-२५।।

अथवा ब्रह्मवृक्षस्य मृदुपत्राणि त्रोटयेत् ॥२६॥
छायाशुष्कं विधायाथ सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
दशपलं द्वादशं वा सर्पिषालोड्य स्निग्धके ॥२७॥

भाण्डे धृत्वा धान्यराशौ चैकविंशतिवासरम्।
यथाबलं पलं मानं पयसा भक्षयेन्नरः ॥२८॥
षष्टिकौदनकं सेवेत्पिपासा यदि वर्धते।
खदिरक्वाथसम्मिश्रं जलं पायेद्विचक्षणः ॥२९॥
विंशतिदिनमात्रेण फलञ्च लभते शृणु।
मत्तमातङ्गवद्वीर्यो वायुतुल्यपराक्रमः ॥३०॥
दिव्यचक्षुर्महातेजा वह्निज्वालासमप्रभः।

अथवा पलाश के कोमल पत्तों को तोड़कर छाया में शुष्क करके उनका सूक्ष्म चूर्ण बनाकर उसमें से दश अथवा बारह पल की मात्रा में लेकर घृत लपेटकर स्निग्ध भाण्ड में रखकर इक्कीस दिनों तक धान्यराशि में रखने के बाद वहाँ से निकालकर अपने शरीरबल के अनुसार एक पल की मात्रा में दूध के साथ ग्रहण करे तथा साठी चावल के भात का भोजन करे एवं प्यास लगने पर खैर के क्वाथ में जल मिलाकर पान करे। इस प्रकार बीस दिन तक सेवन करने का जो फल प्राप्त होता है, उसे सुनो। वह पुरुष मतवाले हाथी के समान बलवान होने के साथ-साथ वायु के समान पराक्रमी हो जाता है; वह दिव्य दृष्टि एवं महान् तेज से युक्त होकर अग्निज्वाला के समान प्रभा से समन्वित हो जाता है।।२६-३०।।

अथवा ब्रह्मवृक्षस्य त्वचश्चूर्णानि कारयेत् ॥३१॥
क्षीरेणैव प्रभक्षेत्तल्लघ्वाहारो जितेन्द्रियः।
मासार्द्धस्य प्रयोगेण दीर्घायुर्जायते नरः ॥३२॥
भ्रमरसदृशाः केशाः कुञ्चिताश्च भवन्ति ते।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां शुल्वं भवति काञ्चनम् ॥३३॥

अथवा पलाश के छाल को सूक्ष्म चूर्ण करके अपने बल एवं अग्नि के अनुसार मात्रा को लेकर दूध के साथ सेवन करे, अल्प आहार ग्रहण करे एवं जितेन्द्रिय रहे। इस प्रकार पन्द्रह दिनों के प्रयोग से मनुष्य दीर्घायु होता है तथा उसके केश भ्रमर के समान काले एवं आकुञ्चित हो जाते हैं। उसके मूत्र और विष्ठा के संसर्ग से ताम्र भी स्वर्ण बन जाता है।।३१-३३।।

अथवा तैलं पलं नीत्वा वल्कलेनैव पाचयेत्।
ससहायः पिवेत्प्राज्ञो मूर्च्छा तत्रैव जायते ॥३४॥
ततः क्षीरं पिवेन्मासं ततः षष्टिकभोजनम्।
सप्तरात्रपरं मर्त्यश्छिद्राम्पश्यति मेदिनीम् ॥३५॥

अन्धमूषान्तरे दत्वा चूर्णभागं क्षिपेत्पुनः।
पातयेद्यत्नपूर्वेण शेषन्ताम्रं पुनः क्षिपेत् ॥३८॥
शेषे शुल्वे प्रदत्ते च भ्रामयित्वा द्रवं चरेत्।
अवशिष्टं शेषचूर्णस्यार्द्धं तस्मिन् प्रदापयेत् ॥३९॥
तस्य द्रावे समायाते सर्वं चूर्णं च निक्षिपेत्।
द्रावयित्वा विशेषेण रसाकारञ्च कारयेत् ॥४०॥
तावदावर्त्तनं कुर्याद्यावच्छुल्वञ्च तिष्ठति।
आवर्त्तनकृते तत्र शेषं ताम्रं सुरक्षयेत् ॥४१॥
एवं सम्पादनाच्छुद्धं यच्छेषं लभते तदा।
जायते माक्षिका राजिरुत्कृष्टा रसकारिका ॥४२॥

अब तृतीया माक्षिकराजि को कहता हूँ। चार-चार पल (सोलह-सोलह तोला) की मात्रा में शुद्ध ताम्र और कांस्य को एकत्र करने के बाद उनके ही बराबर तुत्थ और तुत्थ के बराबर स्वर्णमाक्षिक को खरल में सूक्ष्म चूर्ण करके वस्त्र से छान कर अलग रख ले। इसके बाद ताम्र और कांस्य को मूषा (घरिया) में द्रवित करके उसमें चूर्ण का अष्टमांश प्रक्षेप करे। जब चूर्ण द्रवित हो जाय तो सप्तमांश प्रक्षेप करे। इस प्रकार आवर्त्तन करके दूसरी मूषा में रखकर द्रवित करे, उसमें अवशिष्ट लयांश ताम्र का प्रक्षेप करे। जब छः बार इस प्रकार प्रक्षेप हो जाय तो उसका संरक्षण करे और मूषा के ताम्र को सुहागा देकर द्रवित करे। वह जब रजत के स्वरूप का हो जाय तो उसमें पुनः चूर्ण के एक भाग को मूषा में द्रवित करके प्रक्षेप करे, जब उसका भी द्रवाकार स्वरूप हो जाय तो एक भाग और चूर्ण का प्रक्षेप करने के पश्चात् निकालकर रजत-स्वरूप की वस्तु को अन्य मूषा में रखकर द्रवित करे और तृतीयांश ताम्र के खण्ड का उसमें पुनः प्रक्षेप करके द्रवित करे। इस प्रकार पुनः चूर्ण का प्रक्षेप करके रजताकार रूप में उसे ढाल दे। पुनः मूषा में रखकर द्रवित करे और एक भाग चूर्ण का प्रक्षेप करके ढाल दे। तदनन्तर अन्धमूषा में उसको रखकर एक भाग चूर्ण का प्रक्षेप करे, जब द्रवित हो जाय तो ढाल दे। अब मूषा में रखकर द्रवित करके उसे भ्रमण (घुमाना, नचाना) कराकर रसाकार रूप में देखकर चूर्ण का अर्द्धांश प्रक्षेप कर दे। जब वह पूर्ण रूप से रसाकार हो जाय तो सभी चूर्णों का प्रक्षेप कर दे और उसको द्रवित कर ले। इस प्रकार उसका तब तक आर्वतन करता रहे, जब तक कि ताम्रमात्र शेष न रह जाय। वार-वार की आवृत्ति कर लेने पर ताम्र को सुरक्षित कर ले। यही माक्षिकराजि होती है, जो पारद को श्रेष्ठ करने वाली कही गई है।।२९-४२।।

तामेव माक्षिकाराजिं सुवर्णे दापयेद्यदा।
हेमरक्तिम जायेत सुवर्णं शोभनं भवेत्।
त्रिवारेण कृतेनैव हेमराजिः प्रजायते ॥४३॥

उसी माक्षिकराजि को स्वर्ण में देने से स्वर्ण रक्तिम वर्ण वाला होकर अतिशय सुन्दर हो जाता है। इस प्रकार तीन बार प्रक्षेप करके आवृत्ति देने से 'हेमराजि' हो जाती है।।४३।।

५. नागराजिः

भागैकं शुद्धशुल्वस्य पूर्वं संस्थापयेन्नरः।
षड्भागं मृतनागस्य शिलया कारितं पुरः ॥४४॥
तत्समं माक्षिकं खल्वे पिष्ट्वा वस्त्रेण पूतितम्।
रक्षयेद्यत्नपूर्वेण तत्ताम्रं द्रावयेत्तदा ॥४५॥
द्वादशभागस्य चूर्णस्य भागैकं दापयेत्सुधीः।
पुनरावृत्तिद्रवं कृत्वा वारं-वारं प्रदापयेत् ॥४६॥
द्वादशावर्त्तनं कृत्वा मेलयेन्निम्बूजं रसम्।
आवर्त्तनविधानेन चातिरक्ततमो भवेत् ॥४७॥
जायते तादृशं ताम्रं प्राची सूर्योदयो यथा।
पुनरावर्तयेत्तावद्यावच्छुल्वञ्च तिष्ठति ॥४८॥
नरसारस्य चूर्णन्तु ततः तस्मिन् प्रदापयेत्।
अष्टांशञ्च त्रिवारेण प्रतिवारं क्षिपेत्सदा ॥४९॥
अतीव जायते दिव्यं सर्वाङ्गं सुन्दरं महत्।
पातयेद्यत्नपूर्वेण पत्रं कृत्वा प्रदापयेत् ॥५०॥
इयञ्च नागजा राजिः सामान्या सूतसाधनी।
कर्म कुर्यात्तु स्वर्णस्य एकवर्णविवर्द्धिनी ॥५१॥

सर्वप्रथम एक भाग शुद्ध ताम्र एकत्र करने के पश्चात् छः भाग मैनसिल से मारा हुआ नाग और उतने ही स्वर्णमाक्षिक को खरल में पीसकर वस्त्र से छानकर रख ले। इसके बाद लाये हुये ताम्र को मूषा में रखकर अग्नि में द्रवित करे; बारह भाग मिले चूर्ण में से एक भाग का प्रक्षेप करे, जब चूर्ण का द्रव हो जाय तो पुनः प्रक्षेप करे। इस प्रकार बारह आवृत्ति करके समस्त चूर्ण का ताम्र में विलय कर दे। जब वह स्वच्छ द्रवाकार रह जाय तो उसमें निम्बू का रस दे। इस प्रकार आवृत्ति के देने से ताम्र अत्यन्त ही रक्त वर्ण का हो जाता है (यह आवृत्ति तब तक करनी चाहिये, जब तक कि

अनेनैव प्रकारेण शुद्धतालन्तु जायते।
विशुद्धं रक्षणं कुर्याद्यत्नेन कर्म कारयेत् ॥१६॥

हे राम! जब गन्धक प्राप्त नहीं हो रह हो तो हरिताल से ही क्रिया करनी चाहिये। हरिताल के सम्बन्ध से गन्धक के आधी ही क्रिया होती है। हरिताल को क्वाथ, काञ्जी, श्वेत कूष्माण्ड के रस और तक्र (मट्ठा) में कण के समान चूर्ण करके शोधन करे, यह शोधन अथवा स्वेदन दोलायन्त्र के द्वारा युक्तिपूर्वक करना चाहिये। छः घण्टे तक स्वेदन करने से यह प्रत्यक्ष फल देता है। क्वाथ आदि चारो औषधियों में सात-सात बार स्वेदन करना चाहिये। इससे हरिताल जिस प्रकार शुद्ध होता है, उसे मैं कहता हूँ। मलरहित गोदन्ती हरिताल को लाकर उसके प्रत्येक पत्तों को अलग-अलग करके संगृहीत करने के बाद उसमें से स्वच्छ पत्र को ग्रहण कर लेना चाहिये एवं मलिन पत्रों का त्याग कर देना चाहये। हरिताल के उन स्वच्छ पत्रों को वस्त्र में बाँधकर पोटली बनाने के बाद हरिताल से त्रिगुण प्रस्तरचूर्ण के साथ उसे हाण्डी में रखकर जल में डूबो देना चाहिये। आधी रात को मन्थन करके उसे कीचड़ के समान बनाने के बाद उसे छः घण्टे तक स्थिर छोड़ देना चाहिये। प्रातःकाल उस जल को दूसरे भाण्ड में रखकर उस भाण्ड को चूल्हे के ऊपर स्थापित कर उसमें ग्रन्थी बाँधकर दोलायन्त्र बनाकर छः घण्टे तक रखकर अग्नि में पाक करना चाहिये। उस समय मध्य में यदि उस जल का शोषण हो जाय तो ऐसी स्थिति में भाण्ड में और जल ड़ालते रहना चाहिये। जब घण्टे पूर्ण जा जायँ तो पोटली में लगे मल को धो लेना चाहिये। ऐसा करने से वह हरिताल उत्तम कोटि का हो जाता है। इसके बाद शुद्ध मृत्तिका अथवा चीनी के पात्र में तक्र के रसभाग को रखकर पोटली के द्वारा छः घण्टे तक स्वेदन करने के पश्चात् उसे शुद्ध जल से धो लेना चाहिये। तत्पश्चात् काञ्जी को गाढा बनाकर भाण्ड में रखकर पूर्ववत् स्वेदन तथा प्रक्षालन करने के बाद कुलथी के क्वाथ (काढा) में पूर्ववत् स्वेदन और प्रक्षालन करना चाहिये। इसके अनन्तर पुनः काञ्जी में पूर्ववत् स्वेदन और प्रक्षालन करके प्रथम बार के अनुसार कूष्माण्ड (सफेद कोहड़ा, भतुआ) के रस में पूर्ववत् स्वेदन एवं प्रक्षालन करना चाहिये। इस क्रिया में गोदन्ती हरिताल यदि एक सेर हो तो पत्थर का चूर्ण एक पाव रखना चाहिये। इस प्रकार से गोदन्ती हरिताल शुद्ध हो जाता है। इसको सुरक्षित रखकर युक्तिपूर्वक क्रिया करनी चाहिये।।१-१६।।

तारविधिः

शुद्धतालस्य योगेन रौप्यसिद्धिः प्रजायते।
धन-ऋद्धिकरं तालं शृणुष्व जायते यथा ॥१७॥

तालन्तु विंशतिर्भागं चतुर्भागं तु सूतकम् ।
चतुर्विंशतिकं भागं सर्वं खल्वे निधापयेत् ॥१८॥
आम्रत्वचोरसं नीत्वा पृथक्स्थाल्यां निधापयेत् ।
खल्वे रसं प्रदद्याच्च पलार्द्धन्तु पुनः पुनः ॥१९॥
दिनैकं मर्दनेनैव पिष्टिरूपं प्रजायते ।
कूप्यां तां दापयेन्नीत्वा लेपयेन्मृद्वस्त्रकैः ॥२०॥
मुखञ्च मुद्रयेत्ताम्रपत्रैः त्रिंशद्गुञ्जकैः ।
वस्त्रमृत्तिकया सार्द्धं तत्र लेपं प्रदापयेत् ॥२१॥
छायाशुष्कं ततः कृत्वा चुल्ल्याञ्च स्थापयेत्ततः ।
अग्निदानं प्रमाणेन कारयेच्छुभगो नरः ॥२२॥
कूपीकाचश्च यामैकं वह्निं कुर्यान्मृदुं नरः ।
पश्चात्तत्र हठाग्निञ्च यावद्यामचतुष्टयम् ॥२३॥
सत्त्वमुड्डीय कूप्याञ्च कण्ठे विशति सत्वरम् ।
एतत्तु शुद्धसत्त्वं हि प्रतिकूप्यां कृतं महत् ॥२४॥
ततश्च संग्रहं कुर्यात्काचपात्रे निधापयेत् ।
तत्सत्त्वं कार्यकाले च योजयेत्साधको नरः ॥२५॥
त्रोटयित्वा ततः कूपीं कण्ठाद् ग्रास्यं समग्रकम् ।
क्षिप्त्वा स्थाल्याम्रस्वरसस्य पलार्द्धन्तु प्रतिक्षणम् ॥२६॥
सप्ताहं प्रत्यहं पिष्ट्वा नूत्नकूप्यां प्रदापयेत् ।
सप्तधा सप्तकूपीभिः कर्त्तव्यो विहितो विधिः ॥२७॥
ततः सप्तमवेलायां कृष्णत्वं याति कण्ठके ।
कूप्यां मध्ये क्षिपेत्तान्तु ये वारिसदृशा कणाः ॥२८॥
सप्तसिद्धाश्च ते सर्वे कार्ये ग्राह्या व्यवस्थिताः ।
मानं कृत्वा ततस्तस्माद् द्विगुणं शुद्धपारदम् ॥२९॥
यामं खल्वे द्वयं पिष्ट्वा निम्बुजेन रसेन वै ।
वारं वारं क्षिपेच्चैवं निम्बुजं मर्दयेत्तथा ॥३०॥
ततश्च पिष्टिका जाता सूततालद्वयस्य सा ।
तस्याश्च पोटलीं कुर्याद्दोलायन्त्रं विधाय तु ॥३१॥
स्थालिकायाञ्च तां धृत्वा काञ्जिकं लवणं तथा ।
निम्बुजं स्वरसं क्षिप्त्वा स्वेदयेद्दिवसं परम् ॥३२॥

इसी प्रकार से पारद तालसत्त्व का भी पान करता है, जिससे ताम्र का रजत होता है और जिसके भक्षण करने से सांसारिक कष्टों का विनाश होता है। हरितालसत्त्व के साथ पीत संखिया को ग्रहण करके पारद मतवाला हो जाता है, उसमें ताम्बूल-रस के साथ तृतीयांश पीत गन्धक देकर एक प्रहर तक मर्दन करने के उपरान्त शुष्क करके कूपी में रखकर एक प्रहर तक क्रमशः मन्द, मध्य, हठाग्नि देने के बाद स्वाङ्ग शीतल होने पर निकालकर संग्रह करके उसका तीसवाँ अंश यदि द्रवित ताम्र में मिलाया जाय तो वह द्रवित ताम्र सुन्दर स्वर्ण बन जाता है। अन्य स्थलों पर तालतैल के भी सुन्दर योग का वर्णन किया गया है।।५७-६०।।

तालतैलम्

आनयेत्स्तबकं तालं पत्रं कुर्यात्पृथक् पृथक्।
स्वर्णाभाञ्च विशेषेण रक्षयेद्विधिना ततः ।।६१।।
गोदुग्धे पाचनं कुर्यादातपेन यथोचितम्।
अहोरात्रं विपाच्यैव शुद्धमुद्धृत्य संग्रहेत् ।।६२।।
खल्वमध्ये च संस्थाप्य माच्या रसेन भावयेत्।
उच्छ्वेते च समायाते कारयेद्भावनात्रयम् ।।६३।।
दशांशं टङ्कणं दत्वा कारयेत्कर्दमाकृतिम्।
छायायां शोषणं कृत्वा नीलकूप्यां निधापयेत् ।।६४।।
अश्वपुच्छम्प्रदायैव मुखे वेष्टनमाचरेत्।
पातालयन्त्रके धृत्वा छागीविष्टेन पूरयेत् ।।६५।।
अग्निदानेन शोषे च तैलं मुञ्चति शो[illegible]नम्।
तत्तैलं लेपयेत्तारे वह्नौ रक्तेन हाटकम् ।।६६।।

स्वर्णवर्ण के तबकिया हरिताल को लाकर उसके एक-एक पत्र को पृथक् करके सुरक्षित कर उसको पोटली में बाँधकर एक भाण्ड में गोदुग्ध रखकर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर उसमें उस पोटली को दोलायन्त्र की सहायता से लटकाकर चूल्हे के नीचे चौबीस घण्टे तक दिन-रात मन्द-मन्द अग्नि देते हुये पाक करके प्रक्षालन करने के उपरान्त खरल में रखकर उसमें मकोय के पञ्चाङ्ग का रस देकर मर्दन करते हुये हरिताल जब उज्ज्वल हो जाय तो ताल के दशमांश सुहागा देकर मकोय के रस की तीन भावना देनी चाहिये। जब वह कीचड़ के समान हो जाय तो उसे छाया में शुष्क करके नीले काच की कूपी अथवा शीशी में रखकर शीशी के मुख पर घोड़े की पूँछ के बाल लपेटकर उसपर सात बार वस्त्रमृत्तिका लपेट देना चाहिये। इसके बाद उसे

छाया में शुष्क करके एक मृत्तिका के नाद की पेंदी में छेद करके उसमें शीशी के उल्टामुख करके लटकाकर उसके अगल-बगल गीली मृत्तिका देकर दबा देना चाहिये। उसके ऊपर नाद में बकरी की मिगनी (लेंडी) रखकर अग्नि में तपाने से तप्त होकर रक्त वर्ण वाला हो जाने पर वह पत्र स्वर्ण बन जाता है।।६१-६६।।

अन्योऽपि चोत्तमो योगो हरितालस्य वर्तते।
जातमात्रेण शुकञ्च मात्रा सार्द्धं सुरक्षयेत्॥६७॥
दापयेच्चणकां दालीं यथाक्रमक्रमेण तम्।
विधिश्च गन्धवद्दिव्यः पशुवर्गेण जायते॥६८॥
पश्चान्मिश्रणं कृत्वा तालञ्च दापयेच्छनैः।
मापनात्क्रमशो वृद्धिर्जायते त्रिगुणो यदा॥६९॥
पुरीषं संग्रहं कुर्यादुत्तरोत्तरकं तदा।
दापयेन्मापनं कृत्वा यावद्विंशपलावधिम्॥७०॥
भाण्डमध्ये च तं धृत्वा कीटोत्पत्तिञ्च कारयेत्।
कीटोऽपि भक्षयेत्सत्त्वं पीतवर्णश्च जायते॥७१॥
काचकूप्यां क्षिपेच्चोष्णे नीरे मैलं प्रमुञ्चति।
ताम्रपत्रे च संस्थाप्येदग्नितापेन हाटकम्।
तत्तैलं कार्यसिद्ध्यर्थं शुल्वतारेण हाटकम्॥७२॥

और भी हरिताल तैल का उत्तम योग होता है। उत्पन्न होते ही तोते के बच्चे की उसकी माता के साथ रक्षा करे और चने की दाल को धीरे-धीरे अधिक मात्रा में उसे खिलाता जाय, यह विधान गन्धकल्प के अनुसार करना चाहिये। तदनन्तर हरिताल का चूर्ण, खोवा एवं मिश्री को चना में मिलाकर खिलाते हुये उसकी विष्टा का संग्रह करता जाय। इससे सुग्गा को तौलने से वह दिनोंदिन बढ़ता हुआ तीनगुणा ज्ञात होगा। तौल करके तब तक खिलाना चाहिये, जब तक कि उसकी विष्टा बीस पल (एक सेर) न हो जाय। तब उसको मृत्तिका के नाद में रखकर पानी का हल्का छींटा देते हुये उसमें कीड़ा उत्पन्न करना चाहिये। यह क्रिया एकान्त स्थान में करनी चाहिये। उत्पन्न हुये वे कीड़े उसके सार भाग को खाकर जब पीत रङ्ग के हो जायँ एवं बड़े कीड़े अपने से छोटे कीड़ों को खाते हुये मोटे हो जायँ तो उनको निकालकर काच की शीशी में रखने के बाद उष्ण जल में रख देना चाहिये। इससे कीड़ों का तेल प्राप्त हो जाता है। उस तेल का ताम्रपत्र के ऊपर लेप करके अग्नि में तपाने से वह ताम्रपत्र स्वर्ण बन जाता है। इसी प्रकार रजतपत्र पर लेप करके तपाने से भी स्वर्ण बनता है और उससे अभिलषित कार्य की सिद्धि होती है।।६७-७२।।

शोषण हो जाने पर पूर्ववत् हठाग्नि देनी चाहिये। इस बार भी पारद के कूपी के तल में स्थिर होकर बैठ जाने पर उसको युक्ति के साथ तल से निकालकर उसमें तीक्ष्ण जल देकर खरल के मध्य में उस पारद का इक्कीस घण्टे तक मर्दन करना चाहिये; साथ ही बीच-बीच में जल को भी युक्तिपूर्वक देते रहना चाहिये। मर्दन के पश्चात् शोषण हो जाने पर उसे दूसरी कूपी में रखकर उसके मुख के मध्य में कील लगाकर हठाग्नि के द्वारा बालुका यन्त्र के ऊपर रखकर इक्कीस घण्टे तक पाचन करना चाहिये। अब पुनः कूपी से निकालकर बून्द-बून्द तीक्ष्ण जल गिराते हुये अट्ठारह घण्टे तक उसका सिञ्चन करने के बाद कूपी में रखकर पाचन करना चाहिये। ऐसा करने से वह पारद तीन घण्टे में स्थिर हो जाता है। तत्पश्चात् स्वाङ्ग शीतल होने पर उस कूपी से पारद को निकाल लेना चाहिये। वह निश्चित रूप से चन्द्रकान्ति के समान कान्ति वाला हो जाता है। उसमें से साठवाँ अंश द्रवित ताम्र में देने से वह ताम्र उत्तम कोटि का स्वर्ण बन जाता है।।१२-२१।।

अन्यं वक्ष्ये परं योगं तीक्ष्णवारेर्महत्तरम्।
काशीशं गन्धकं तुल्यं शुद्धखल्वे प्रदापयेत्॥२२॥
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा तैजसं वारि दापयेत्।
निःसरन्ति प्रसर्पन्ति शिलानृसारटङ्कणाः॥२३॥
ध्मात्वाकाशञ्च गोदन्तीं तप्तं दत्वा विमर्दयेत्।
द्विगुणं शुल्वभस्मञ्च खल्वे दत्त्वा विमर्दयेत्॥२४॥
तीक्ष्णवारिणि सम्प्राप्ते कूप्यां संस्थाप्य यत्नतः।
हठाग्नौ दिवसं यावच्चन्द्रिका जायते ध्रुवम्॥२५॥
पुनरेवं क्रियां कुर्याज्जलं तीक्ष्णं प्रदापयेत्।
हठाग्नौ पाचनेनैव शतांशैर्वेधयेद् ध्रुवम्॥२६॥
अनेनैव प्रकारेण दिने षष्टितमे गते।
एकवारे कृते सिद्धिर्जायते नात्र संशयः॥२७॥

अब तीक्ष्ण जल के अन्य महायोग को कहता हूँ। तालकाशीश और आमलासार गन्धक को समान भाग में एकत्र कर खरल में रखकर सूक्ष्म चूर्ण करके उसमें तैजस जल देकर मर्दन करे। उसमें मैनसिल, खपड़िया, नसादर और सुहागा—प्रत्येक को षोडशांश भाग मिलाकर एकीकरण कर ले। जब सब जलाकार हो जायँ तो उसमें अभ्रक और गोदन्ती हरिताल को अग्नि में तपा-तपाकर तब तक बुझावे, जब तक कि वह पूर्ण कोमल न हो जाय।। तत्पश्चात् उसको खरल में रखकर सूक्ष्म मर्दन करने

के बाद उसी खरल में द्विगुण ताम्रभस्म को देकर बीच-बीच में तीक्ष्ण जल देते हुये पुनः मर्दन करे। तीक्ष्ण जल का पान कर लेने के बाद उसे सतर्कतापूर्वक कूपी में रखकर कील लगाने के उपरान्त वस्त्रमृत्तिका से बन्धन करके बालुका यन्त्र के ऊपर रखकर हठाग्नि जलाने से एक दिन में ही वह पारद निश्चित रूप से चन्द्रकान्ति के समान कान्ति वाला हो जाता है। तदनन्तर पुनः उसी प्रकार खरल में रखकर तीक्ष्ण जल के साथ मर्दन करके शोषण होने पर काँच की कूपी में रखकर पूर्ववत् क्रिया सम्पन्न करनी चाहिये। इस प्रकार करते हुये साठ दिन व्यतीत हो जाने पर वह सिद्ध होकर शतांश से ताम्र और रजत का वेध करने वाला हो जाता है। इसको एक बार बना लेने से ही समस्त सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं।।२२-२७।।

रसकं गन्धकं तुत्थं समभागं समानयेत्।
मर्दयेदर्कजैस्तोयैर्याममात्रमखण्डितम् ॥२८॥
तद्दुग्धेनापि मर्देत्तु द्विगुणा भावना जलात्।
मर्दयित्वा ततः कुर्याच्चणतुल्यवटीं नरः ॥२९॥
तेनैव मेलनं कुर्यान्निष्काश्य तैजसं जलम्।
दिवसं त्रिंशदं यावत्तज्जलैर्मर्दयेद्रसम् ॥३०॥
हठाग्नौ बालुकायन्त्रे कूप्यां यामं त्रयोदश।
पूर्ववत्सेचनं कुर्यात्पाचनं मर्दनं तथा ॥३१॥
हठाग्नौ पाचिते पूर्णे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
शुद्धवङ्गे प्रदातव्यं षष्ट्यंशैः शोषयेज्जलम् ॥३२॥
अतिदिव्यतरं रौप्यं द्वाविंशांशं विजायते।
तद्धनैः साधयेदेव तूर्यविंशकरीं क्रियाम् ॥३३॥

अथवा पीत खपरिया, आमलासार गन्धक और तूतिया को समान भाग लेकर खरल में रखकर मन्दार के स्वरस को देते हुये तीन घण्टे तक निरवच्छिन्न मर्दन करने के उपरान्त मन्दार के दूध के द्विगुण जल की भावना देकर मर्दन करते हुये जब वह गुटी के योग्य हो जाय तो चना के तुल्य वटी बना लेनी चाहिये। उस वटी के साथ तीक्ष्ण जल को मिलाकर तीस दिन तक जल दे-देकर मर्दन करने के बाद शोषण हो जाने पर पूर्ववत् कूपी में रखकर बालुका यन्त्र के ऊपर हठाग्नि के द्वारा उनतालीस घण्टे तक पाचन करे; साथ ही सिञ्चन, पाचन और मर्दन पूर्ववत् करते हुये पूर्ववत् कूपी यन्त्र में रखकर बालुका यन्त्र के ऊपर हठाग्नि के द्वारा पूर्ण पाचन कर लेने पर जब स्वाङ्ग शीतल हो जाय तो कूपी को तोड़कर निकाल ले और उसमें से साठवें अंश

यदीच्छा पीतवर्णस्य सौगन्ध्यं कारयेन्नरः।
तदा तु कारयेच्छीघ्रं पीतवर्णं मनोहरम्॥८॥
आनयेत्कुङ्कुमं दिव्यं नूतनं सरसं तदा।
मर्दयेच्छोभने खल्वे दत्त्वा सौरभतैलकम्॥९॥
गोधूमजार्कं दत्त्वा चन्दनञ्चापि मर्दयेत्।
नवनीतसमं कृत्वा तिलतैलेन मर्दयेत्॥१०॥
पश्चात्तु कूपिकामध्ये द्रावयेद् द्रावचूर्णकम्।
पूर्ववच्च क्रियां कुर्याद्यत्नेन शुभगो नरः॥११॥
अनेनैव प्रकारेण पीतरङ्गः प्रजायते।
रञ्जनं कारयेदित्थं सुगन्धैर्नात्र संशयः॥१२॥

यदि सुगन्धि तैल में पीत रङ्ग लाने की इच्छा हो तो शीघ्र ही मनोहारक पीत रङ्ग बना कर नवीन रसयुक्त केशर को खरल में रखकर सुगन्धि तैल को उसमें डालकर मर्दन करे। उसमें गेहूँ के चूर्ण और मलयागिरि चन्दन के चूर्ण को देकर मर्दन करके उसे मक्खन के समान बना ले। अब उसमें तिलतैल देकर मर्दन करने के बाद वकयन्त्र में रखकर उसे निकाल ले। इस प्रकार पीत वर्ण का तैल बन जाता है, उससे उक्त प्रकार से पारदादि का रञ्जन करना चाहिये।।८-१२।।

आरक्तस्य यदीच्छा चेत्तदा चैवं समाचरेत्।
आनयेत्ताम्रकं दिव्यं नूतनं मलवर्जितम्॥१३॥
कर्पूरस्य जलैर्दिव्यैर्भावयेद्भावनां ततः।
भावनया भवितेऽपि रक्तिमा भवति तदा॥१४॥
तस्मिँश्च भावयेद्रालं त्रिवारं खल्वमध्यके।
अतिरक्तं विजायेत छायाशुष्कं समाचरेत्॥१५॥
द्रावयेत्तैलकार्यार्थं यथोक्तविधिना ततः।
आरक्तो जायते द्रावो रालस्य तीक्ष्णकार्यदः॥१६॥
अनेनापि प्रकारेण तीक्ष्णतैलं प्रजायते।
तेनैव धनसम्पत्ती चोर्ध्वकर्म च साधयेत्॥१७॥

यदि रक्त वर्ण का तैल बनाना हो तो इस प्रकार की क्रिया करनी चाहिये। मलरहित शुद्ध ताम्र को लाकर कपूर के जल की सात भावना देने से वह रक्त वर्ण का हो जाता है। उसके साथ राल की तीन भावना खरल में देने से वह अत्यन्त ही रक्त वर्ण वाला हो जाता है। अब उसको शुष्क होने तक छाया में रख देना चाहिये।

शुष्क हो जाने के बाद तैलकार्य के लिये उसको द्रवित करना चाहिये। इससे राल का रक्त वर्ण का द्राव (तैल) तैयार हो जाता है। इस प्रकार से भी राल का तीक्ष्ण तैल बनता है। उस तैल से धन-सम्पत्ति और मोक्ष की क्रिया का साधन करना चाहिये।।१३-१७।।

२. गन्धकतैलम्

त्रिधारावज्रवल्ल्या वा जम्बूबिल्वरसेऽथवा।
सप्ताहं द्विसप्ताहं वा स्थापयेद्गन्धकं ततः ॥१॥
तच्च कोमलजं ज्ञात्वा कूप्यां संस्थापयेत्तदा।
पातालयन्त्रराजेन गृह्णीयात्तैलमुत्तमम् ॥२॥
धातूनां रञ्जनञ्चैव वेधकं जायते सदा।
देहस्य वेधनञ्चापि रञ्जनं कारयेत्तथा ॥३॥
हयमारिदले मध्ये गन्धकं स्थापयेन्नरः।
पातालयन्त्रराजेन तस्य तैलं समाहरेत् ॥४॥

त्रिधारा हड़जोड़ (जिसमें काँटा नहीं होता और जो पतली तथा एक-एक अङ्गुल पर गाँठ वाली लता के समान होती है), जामुन की छाल और बेल का रस—इनमें से किसी के भी रस में पन्द्रह अथवा बारह घण्टे तक गन्धक को रखकर जब वह कोमल हो जाय तो रस से निकालकर दशमांश सज्जी अथवा सुहागा देकर मर्दन करके गोली बनाने के पश्चात् उन गोलियों को काँच की कूपी में रखकर पाताल यन्त्र के द्वारा निकाला गया उनका तैल धातुरञ्जक और वेधक होता है। इसी प्रकार वह शरीर का भी रञ्जक और वेधक होता है; यही गन्धकतैल की महिमा होती है।

रक्त वर्ण के पुष्प वाली कनैल के पत्ते को छाया में शुष्क करने के बाद कूपी में रखकर उसके साथ गन्धक को रखकर पातालयन्त्र के द्वारा अग्नि देने से गन्धक का तैल सुगमता-पूर्वक निकाला जा सकता है।।१-४।।

३. भूनागतैलम्

भूनागानानयेद्रक्तान् सद्यः प्राणविवर्जितान्।
रक्षयेत्काष्ठजे पात्रे ततः कर्म समाचरेत् ॥१॥
स्थापयेत्कूपिकायन्त्रे क्रमशः सघनं यथा।
मृद्वस्त्रेणैव लेपञ्च सप्तवारं समाचरेत् ॥२॥
शलाकाञ्च मुखे दत्वा मुखं कुर्यादधस्तथा।
उपलाग्निं तत्र कुर्यात्पाचयेद्याममात्रकम् ॥३॥

गजपुटम्

सपादहस्तमानेन कुण्डे निम्ने तथायते।
वनोपलसहस्रेण पूर्णे मध्ये निधापयेत् ॥१॥
पुटनद्रव्यसंयुक्तां कोष्ठिकां मुद्रितां मुखे।
वनोपलार्द्धमूर्ध्वञ्च दत्वाऽऽवरणमानयेत् ॥२॥
एतद्गजपुटं प्रोक्तं युक्तं सर्वपुटोत्तमम् ॥३॥

सवा हाथ (चौबीस अंगुल) के गहरा एवं उतना ही लम्बा-चौड़ा एक कुण्ड (गड्ढा) बनाकर उसमें एक हजार वनोपल फैलाकर उन वनोपलों के ऊपर पुट वाली मुद्रित औषधि को रखने के बाद उसके ऊपर पुनः पाँच सौ वनों को फैलाकर अग्नि जलाने को ही 'गजपुट' कहा जाता है; यह सभी पुटों से उत्तम होता है।।१-३।।

वाराह-कौक्कुटपुटम्

अरत्निमात्रके कुण्डे पुटं वाराहमुच्यते।
वितस्तिमात्रकं खातं कथितं कौक्कुटं पुटम् ॥१॥

कनिष्ठिका अङ्गुली को बाहर निकालकर मुट्ठी बाँधने के बाद एक हाथ गहरे तथा उतने ही लम्बे-चौड़े कुण्ड में वनोपलों को रखकर जो पुट दिया जाता है, उसे 'वाराह पुट' कहा जाता है एवं एक वित्ता गहरे एवं लम्बे-चौड़े गड्ढे में जो पुट दिया जाता है, उसे 'कुक्कुट पुट' कहा जाता है।।१।।

कपोतपुटम्

अष्टसंख्योपलैः खाते यत्पुटं दीयते यदा।
कपोतपुटमाख्यातं सहजं पुटपण्डितैः॥१॥
गोष्ठान्तर्गोखुरक्षुण्णं शुष्कं चूर्णितगोमयाम्।
करीषा तत्समाख्यातं वरिष्ठं रससाधने ॥२॥

आठ वनोपलों के द्वारा जो पुट दिया जाता है, उसे पुट के ज्ञाता पण्डितजन 'कपोतपुट' कहते हैं। गोष्ठ (गाय बाँधने का स्थान) पर गाय के खुर से कुचलकर शुष्क होकर जो गोबर चूर्ण-चूर्ण हो जाता है, उसे 'करसी' कहते हैं। यह पारद के साधन में उपयोगी होता है।।१-२।।

करीषपुटम्

बृहद्भाण्डस्थितं यन्त्रं करीषैर्दीयते पुटम्।
तत्करीषपुटं प्रोक्तं रसज्ञैः सूतभस्मनि ॥१॥

बड़े घड़े अथवा हाण्डी में सम्पुट रखकर करसी से ढककर जो अग्निं दी जाती है, उसे 'करसी पुट' कहा जाता है।।१।।

भाण्डपुटम्

बृहद्भाण्डे तुषैः पूर्णे मध्ये मूषां विधारयेत्।
क्षिप्त्वाग्निं मुद्रयेद्भाण्डं तद्भाण्डपुटमुच्यते ॥१॥

बड़े भाण्ड में मूषा को रखकर ढकने के बाद उसे करसी के मध्य में रखकर जो अग्नि दी जाती है, उसे 'भाण्ड पुट' कहते हैं।।१।।

लावकपुटम्

ऊर्ध्वं षोडशिकामात्रैस्तुषैर्वागोवरैः पुटम्।
यत्र तल्लावकाख्यं स्यात्सुमृदुद्रव्यसाधने ॥१॥

एक पल से अधिक तुष अथवा गोबर का जब पुट दिया जाता है तो उसे 'लावक पुट' कहा जाता है; इससे मृदु अर्थात् कोमल द्रव्यों का साधन किया जाता है।।१।।

●

अथ यन्त्रनिरूपणम्

बालुकायन्त्रम्

भाण्डे वितस्तिगम्भीरे मध्ये निहितकूपिका।
कूपिका कण्ठपर्यन्तं वालुकाभिश्च पूरिते ॥१॥
भेषजं कूपिकामध्ये सकीलैर्वह्निना पचेत्।
बालुकायन्त्रमाख्यातं रसविज्ञविशारदैः ॥२॥

एक वित्ते गहरे भाण्ड के मध्य में कूपी को रखकर उसमें कण्ठपर्यन्त बालू भरकर कूपी में औषधि को रखकर उसके मुख पर कील (डाट) लगाकर सन्धिबन्धन करने के बाद चूल्हे पर स्थापित कर नीचे अग्नि जलाकर पाचन करने को रसक्रिया के ज्ञाता विद्वान् 'बालुका यन्त्र' कहते हैं। इस यन्त्र के द्वारा अन्तर्धूम मकरध्वज, चन्द्रोदय, रससिन्दूर आदि कूपीपक्व रसायन का निर्माण किया जाता है।।१-२।।

विद्याधरयन्त्रम्

अथ स्थाल्यां रसं क्षिप्त्वा निदध्यात्तन्मुखोपरि।
स्थालीमूर्ध्वमुखीं सम्यङ्निरुध्य मृदुमृत्स्नया ॥१॥
ऊर्ध्वस्थाल्यां जलं क्षिप्त्वा चुल्ह्यामारोप्य यत्नतः।
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं यावत्प्रहरपञ्चकम् ॥२॥